द्वितीय अध्याय

मूल्य बोध अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

द्वितीय अध्याय

मूल्य बोध अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

2.1 मूल्य शब्द का अर्थ, परिभाषा

2.2 मूल्य का स्वरूप

2.3 मूल्य : समानार्थी शब्द

2.4 मूल्य विभिन्न शास्त्रों की दृष्टि से

- 2.4.1 समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण
- 2.4.2 अर्थशास्त्रीय दृष्टिकोण
- 2.4.3 मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण
- 2.4.4 दार्शनिक दृष्टिकोण

2.5 मूल्य का विभाजन

2.6 मूल्य विघटन का अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

2.7 मूल्य विघटन के प्रमुख कारण एवं दिशाएं

2.8 मूल्य और साहित्य

2.9 मूल्य का महत्व एवं प्रासंगिकता ।

द्वितीय अध्याय

मूल्य बोध अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

मनुष्य ईश्वर द्वारा रचित संसार की सर्वश्रेष्ठ रचना है। संपूर्ण सृष्टि में मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जिसे ईश्वर ने भौतिक आवश्यकताओं की अनुभूति के साथ विचार, चिंतन जैसी भावनाएं भी प्रदान की हैं। इन्हीं विचारों के द्वारा वह समाज में प्रवेश करता है और अपने जीवन को विकासशील बनाता है। जैसे-जैसे मनुष्य का विकास होने लगा तो उसने उचित आदर्शों को मूल्य के रूप में अपना लिया। इस तरह मनुष्य की अपनी विचारधाराओं एवं मान्यताओं के द्वारा मूल्यों का उद्भव हुआ। साधारण बोलचाल में जिस 'मूल्य' शब्द का प्रयोग बहुदा होता है वह एक तकनीकी शब्द है जिसे बाज़ार व्यवस्था से लिया गया है। इस दृष्टि से 'मूल्य' बाज़ार व किसी वस्तु उत्पाद या सेवा के बदले चुकाई गई चीज़ें हैं। मुद्रा इस चीज़ का सबसे व्यापक और प्रचलित रूप है। समाज में भी आजकल यह शब्द बहुत प्रचलित हो गया है परंतु बदले अर्थ में। आदमी की सोच, उसका आचरण या आविष्कारों के पीछे की मंशा सभी कुछ का आंकलन यह संसार और समाज करता है। इस आंकलन में वह किसी चीज़, सोच या आचरण को कई दर्जे दे सकता है। जैसे यह व्यर्थ है या कुछ काल, स्थान के लिए कामचलाऊ है अथवा वह बहुत समय के लिए बहुत लोगों और बहुत जगहों के लिए उचित है। इन निष्कर्षों के माध्यम से जिन आचरणों को वह बहुत स्थानों, बहुत मनुष्यों और बहुत काल के लिए उचित रहता है- वे ही आचरण, समाज व्यवस्था में मूल्य के रूप में स्वीकार किए जाते हैं।

मूल्यों का स्वरूप प्राचीन समय से ही हमारे समाज में व्याप्त रहा है परंतु साधारण मानव इससे परिचित नहीं था। जैसे-जैसे मानव विकसित होता गया वह मूल्यों को समझने लगा और धीरे-धीरे मूल्य एक पूर्ण विकास का रूप धारण कर गए। ‘मूल्य' 20वीं सदी का चर्चित शब्द माना गया है। मूल्यों का विकास समाज के साथ हुआ है। इसे समाज में व्यक्ति की सांस्कृतिक धरोहर स्वीकारा गया है। जिसके आधार पर समाज में प्रत्येक क्रियाकलाप और व्यवहार होता है। मूल्यों के बिना समाज में मनुष्य का कोई अस्तित्व नहीं है। यह समाज में मनुष्य की पहचान बनाने में सहायता करते हैं। मूल्य मनुष्य को समाज के

नियमों के बारे में जागरूक करते हैं। समाज में रहते हुए मनुष्य परस्पर प्रेम-भावना, आचार-व्यवहार जैसे मूल्यों का प्रयोग करता है। मूल्य मानवीय जीवन को आधार प्रदान करता है। जिसके लिए व्यक्ति और समाज जीवित रहता है तथा ज़रूरत के समय संघर्ष को भी तैयार रहता है। प्रत्येक समाज में कुछ मान्यताएं व धारणाएं विद्‍यमान होती हैं, समय के अनुसार यही मान्यताएं स्थिर होकर मूल्य बन जाती हैं। अत: मूल्य मानवीय जीवन में विशेष स्थान रखते हैं। जीवन एक यात्रा है यह ज्ञात से शुरू होकर संसार, समाज की वस्तुओं और संबंधों के जाल को छूती हुई किसी विज्ञात में जाकर समा जाती हैं। इस दौरान इसे सांसारिक और संसार से दूर की व्यवस्थाओं, अनुभवों, समितियों और कल्पनाओं तथा मिथकों से गुज़रना पड़ता है। मनुष्य को सामाजिक सदस्य के रूप में यह सारी चीज़ें प्रभावित करती हैं। इन्हीं की बहुलता के बीच आदमी अपने लक्ष्यों तथा साधनों का चुनाव करता है। जिन चुनावों को समाज स्वीकृति देकर उसे बार-बार किए जाने की अभिलाषा रखता है उन्हें वह मूल्य नाम देकर गौरव प्रदान कर देता है। परंतु वह मूल्य 'वस्तु' या सेवा के लिए दिए जाने वाले मूल्य से बिल्कुल अलग और गैर बाज़ारवादी है। बाज़ार में प्रचलित मूल्य लाभकर, मांग, पूर्ति और क्रेज़ की मूल प्रेरणा पर आधारित हैं। उपभोक्ता की आवश्यकता की कसौटी पर जो वस्तु या सेवा जितने स्वार्थों की पूर्ति कर सकती है। वह उतनी मूल्यवान है। इसमें स्वार्थ प्रधान रहता है। समाज में जिन्हें मूल्य कहा जाता है वे सब त्याग, दान, असंग्रह, उदारता और परचिंतन व्यवस्था की अंतर प्रेरणा से अनुप्राणित होते हैं। हालांकि कई कारणों से जिनका उल्लेख हम करेंगे, वे सामाजिक मूल्य भी बाज़ार में प्रचलित मूल्यों की तरह समझे जाने और प्रयोग में आने लगे हैं। जीवन, समाज तथा राष्ट्र में मूल्यों की बड़ी महत्ता है। अपने मूल्य आदर्शों से ही किसी भी देश का समाज और उसकी संस्कृति जानी जाती है। शिक्षा की भी सभी क्रियाएं किसी न किसी रूप में मूल्यों से अनुशासित होती हैं, जैसा किसी राष्ट्र का जीवन दर्शन होता है, उसी के अनुरूप वहां मूल्यों की संहिता होती है। आज हम जहां बढ़-चढ़कर पथ की निरपेक्षता की बात करते हैं पर इसके स्थान पर हम आज बहुत कुछ धर्मनिरपेक्ष होते जा रहे हैं। हम सत्य, अहिंसा के शाश्वत आदर्शों से दूर हो रहे हैं। हम अपने जीवन में बुद्ध के अष्टांग मार्ग से विरत होते जा रहे हैं। कदाचित इसीलिए हमारे वर्तमान समाज और

राष्ट्र में मूल्यों का भयावह संकट भी नज़र आता है जोकि गंभीरता से चिंतनीय है। अतः हमारा मानना है कि हमारे जीवन के सभी स्तर मूल्य पर आधारित हों। हमें सभी प्राणियों के प्रति संवेदना हो, हम सहकार भाव से अनुप्राणित हो, हम उपकार वृत्ति से मंडित हो, हम प्रेमाचरण, सत्य, आचरण, सहजाचरण और प्रकृति की ओर अनुराग वृत्तियों को अपनाएं। यह आवश्यक और सर्वथा आचरणीय है। आज समाज में चारों ओर सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक मूल्यों के प्रचार के साथ विघटन भी देखने को मिलता है। आज की भीड़ भरी दुनिया में, नैतिकता की आंधी में, सांप्रदायिक संकीर्णता की बाढ़ में, स्पर्धा की होड़ में, स्वार्थपरता के तूफान में, हमारे सभी आध्यात्मिक, सामाजिक तथा धार्मिक मूल्य बहते चले जा रहे हैं। इस ह्रास के फलस्वरूप रिश्तों के क्षेत्र में भी गिरावट देखने को मिल रही है। आज समाज में सामान्य व्यक्ति की यह धारणा है कि मेहनत मज़दूरी एवं ईमानदारी से जीने वाले व्यक्ति पिस रहे हैं। झूठ, फरेब का रोज़गार करने वाले व्यक्ति निरंतर दिन-दोगनी, रात चौगुनी उन्नति की ओर अग्रसर हैं। ईमानदार व्यक्ति को मूर्ख कहा जाता है। इस धारणा ने शिक्षा के क्षेत्र में अनुशासनहीनता, सत्य के प्रति आस्था व कर्तव्य के प्रति उदासीनता, अनुत्तरदायित्व आदि को जन्म दिया है। इनके फलस्वरूप समाज उत्थान का मार्ग अवरुद्ध हो गया है। अतः आज की विसंगतियों में समाज तथा उसके प्रत्येक सदस्य का यह दायित्व हो जाता है कि वह मूल्यों के विकास पर बल दे क्योंकि मूल्यविहीन राजनीति एवं शिक्षा, विनाश की ओर ले जाएगी।

2.1 मूल्य का अर्थ

मूल्य शब्द अपने आप में विशेष अर्थ का परिचायक है। इसे अनेक रूपों और अर्थों में व्यक्त किया गया है। इसे किसी एक अर्थ में बांधना असंभव है। "मूल्य शब्द संस्कृत की मूल धातु में यत् प्रत्यय लगाने से बना है, जिसका अर्थ कीमत, मज़दूरी आदि होता है।"[1] इस परिभाषा से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि मूल्य शब्द संभवत अर्थशास्त्र से आया हुआ है और अर्थशास्त्रियों द्वारा ही इसका सर्वप्रथम प्रयोग किया है परंतु धीरे-धीरे इसका क्षेत्र इतना विशाल होता गया कि यह अन्य क्षेत्रों में भी उपयोगी होने लगा। मूल्य शब्द अंग्रेजी भाषा के Value शब्द के समतुल्य प्रयोग होता है। Value शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा

के Valere शब्द से हुई है। ''जिसका अर्थ है अच्छा या सुंदर। इस प्रकार मूल्य शब्द के अर्थ मैं शिवम और सुंदरम शामिल रहते हैं।"[2] मूल्य शब्द के इसी अर्थ में ग्रीक में 'एक्सियोज', जर्मन में 'वेट' फ्रांसीसी में 'बोलोट' शब्द का प्रयोग होता है। शब्द के अर्थ के आधार पर सुंदर अथवा अच्छे लगने वाले (अन्य शब्दों में इच्छित अथवा वांछित) को मूल्य कहा जा सकता है।

कोशगत अर्थ

डॉ. धीरेंद्र वर्मा के प्रधान संपादकत्व में संपादित हिंदी साहित्य कोश के अनुसार "मूल्य और प्रतिमान समानार्थी शब्द है। दोनों ही मानव निर्मित निष्कर्ष या कसौटियां हैं। जिनके सहारे साहित्य की परख की जाती है। मनुष्य क्योंकि पहला व्यक्ति है, ईकाई है, इसके अपने कुछ मूल्य होते हैं। परंतु व्यक्ति, एक वृहत्तर मानव समाज, परिवार, नगर, प्रदेश, प्रांत, राष्ट या संसार का सदस्य, नागरिक, सामाजिक विशेष होकर सामान्य अंग भी है। अतः उसके विचार कर्म और कल्पना में मूल्य का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है।"[3] हिंदी साहित्य कोश में मूल्य पर व्यापक परिप्रेक्ष्य में विचार किया गया है। इनसाइक्लोपीडिया (ब्रिटानिका) के अनुसार, "जो जीवन को अस्तित्व और गति प्रदान करें वही मूल्य है।"[4] यही मूल्य को मानव उत्तरजीवित (सर्वाइवल) और अस्तित्व से जोड़कर अवलोकित किया गया है। मानविकी परिभाषा कोश में मूल्य के बारे में लिखा गया है कि "सत्ता के अस्तित्व पक्ष और ज्ञान पक्ष के अतिरिक्त एक महत्व पक्ष भी है। 'मूल्य' शब्द इसी महत्त्व या गुरुत्व की ओर संकेत करता है। मूल्य के संबंध में दो अलग-अलग दृष्टिकोण हैं। एक यह कि मूल्य एक सामान्य (जनरल) और अमूर्त (एब्स्ट्रेक्ट) गुण है जो वस्तुओं में निहित है। वस्तुएं अपने आप में मूल्यवान या मूल्यहीन होती हैं। मूल्य किसी विशिष्ट प्रकार का हो यह आवश्यक नहीं है। दूसरा यह कि प्रत्येक मूल्य जीवन के किसी विशेष क्षेत्र या पहलू से संबंधित है। किसी कार्य, तथ्य या सत्ता के विषय में हम कह सकते हैं कि उसका नैतिक मूल्य क्या है? कलात्मक मूल्य, आर्थिक मूल्य या सामाजिक मूल्य क्या है? लेकिन केवल यह कहना कि वस्तु में मूल्य है, कोई अर्थ व्यक्त नहीं करता।"[5] इस आधार पर कहा जा सकता है कि मानविकी परिभाषा कोश में मूल्य की नीतिशास्त्रीय एवं अर्थशास्त्रीय अर्थ अभिव्यक्ति के आधार पर

विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। मूल्य संबंधी कोशिकाओं के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि जीवन विविध पक्षों से संबंधित है और मूल्य जीवन के इन्हीं पक्षों से जुड़ा होता है। स्वयं में मूल्य की धारणा अत्यंत स्पष्ट एवं अमूर्त है। इस प्रकार मूल्य शब्द की व्याख्या अनेक दृष्टियों से की गई है। आज के समय में 'मूल्य' शब्द अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाए हुए है। साहित्य के क्षेत्र में इसे अलग अर्थ में लिया जाता है। अतः मूल्य विभिन्न ज्ञानानुशासनों द्वारा विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होने लगा है।

मूल्य की परिभाषा

मूल्य शब्द जितना सरल और सहज जान पड़ता है इसकी व्याख्या करना उतना ही कठिन है। मूल्य के विषय में विभिन्न विद्वानों ने अपने भिन्न-भिन्न मत प्रस्तुत किए हैं:- डॉ. बैजनाथ सिंहल के अनुसार "मूल्य कोई स्थूल वस्तु नहीं है। स्थूल और सूक्ष्म, सामायिक और शाश्वत के मध्य संचरणशील चेतना बिंदु है जो बदलते हुए युग के साथ निरंतर आगे की ओर गतिमान रहता है।"[6] अर्थात मूल्य को स्थूल और सूक्ष्म के मध्य केंद्र माना गया है जो समाज के अनुसार अपना कार्य व्यवहार करता है और उसे गतिशीलता प्रदान करता है ।

डॉ. देवराज के अनुसार

"जीवन की वह प्रतिक्रियाएं जिन्हें हम स्वयं में मूल्यवान मानते हैं और जिनकी कामना हम स्वयं उन्हीं के लिए करते हैं जो हमारे जीवन के चरम मूल्यों का निर्माण करती है।"[7] अर्थात इस प्रकार मूल्य को मानवीय जीवन का अध्ययन करने वाली सामान्य विधा कहा गया है।

डॉ. पुष्पपाल सिंह के अनुसार

"मूल्य मानवीय व्यवहार का नियमन करने वाले ऐसे उच्च आदर्श हैं जिनकी अवधारणा युग और समाज की स्थितियों के अनुसार परिवर्तित होती चलती है। यह मनुष्य को श्रेष्ठ से श्रेष्ठतम बनाने का प्रयास है।"[8] अर्थात मूल्य समाज का आदर्शात्मक प्रतिबिंब है जो मनुष्य को शिष्टाचारी बनाते हैं।

गोविंदचंद्र पांडे के अनुसार

"मूल्य बोध ज्ञानात्मक है किंतु यह ज्ञान मूल्यात्मक ज्ञान है जोकि आलोचित विषयों के विवेक में समर्थ एवं विश्लेषणात्मक खंड ज्ञान के परे भेदान्वयिनी दृष्टि का समर्थक है।"[9]

डॉ. हुकुमचंद राजपाल के अनुसार

"मुल्य वह वैचारिक इकाई है जिसे आधार बनाकर मनुष्य अपना जीवन व्यतीत करता है और उसे आत्मोपलब्धि होती है।"[10] अर्थात समाज और मनुष्य की दृष्टि में मूल्य एक महत्वपूर्ण अंश है जो किसी वर्ग या जाति के लिए नहीं अपितु समस्त मानव जाति के लिए आदर्श का प्रतीक है।

हेमेंद्र कुमार पानेरी के अनुसार

"मूल्य समाज के वे आधार स्तंभ हैं जिन पर समाज की सभ्यता एवं संस्कृति का भव्य महल आधारित रहता है।"[11] अर्थात मूल्यों के द्वारा समाज, व्यक्ति और उसकी संस्कृति का निर्माण होता है। संस्कृति मनुष्य को पारंपरिक जीवन जीने के योग्य बनाती है।

धर्मवीर भारती के अनुसार

"मानवीय मूल्य विराट मानव जीवन की अगणित शिराओं में संचालित होता रहता है। जहां भी यह रक्त प्रवाह रुका, वहीं अंग पक्षाघात से आहत होकर सूख जाता है।"[12] अर्थात मानव जीवन में मूल्य प्रवाहमान गति से चलते हैं। इनकी गति थम जाए तो मानव जीवन अस्त-व्यस्त हो जाएगा।

डॉ. रमेश कुंतल मेघ के अनुसार

"मनुष्य की ज्ञानेंद्रियों तथा कामेद्रियों को चिंतन एवं कर्म में प्रवृत्त किया जिसके फलस्वरूप वह कुछ निश्चित लक्ष्यों की तरफ अग्रसर हुआ। यह लक्ष्य ही अपने आदर्श उपयोग अथवा प्रमाणित स्वरूप में मूल्य कहलाए।"[13] अर्थात मूल्य वह धारणाएं हैं जो धीरे-धीरे समाज में स्वीकृत होकर आदर्श बन जाते हैं। यह वैचारिक मानदंड होते हैं जो व्यक्तिगत स्तर से सामाजिक स्तर की ओर अग्रसर होते हैं। इन्हीं आदर्शों के आधार पर मनुष्य सही, गलत की पहचान करता है।

डॉ. हरमोहन लाल सूद के अनुसार

"मूल्य मानव जीवन के कुछ ऐसे लक्षण है जो समाज द्वारा मान्यता प्राप्त कर अलक्षित रूप से हमारे आचरण का संचालन है। हमारे आचरण और व्यवहारों का समूहीकरण ही मूल्य नामक धारणा के रूप में स्थापित होता है। ये धारणाएं ही हमारे व्यापारों का निर्देशन करती हैं। जिनके आधार पर मनुष्य अच्छे-बुरे और सही-गलत की पहचान की घोषणा करता है।"[14] अर्थात मूल्य समाज द्वारा मान्यता प्राप्त होते हैं। मूल्य ही मनुष्य के अच्छे-बुरे तथा सही-गलत की पहचान करवाते हैं।

डॉ. धीरजभाई बणकर के अनुसार

"यह मूल्य ही व्यक्ति, समाज व राष्ट्र के विकास में सहायक होते हैं। यह कहा जा सकता है कि मूल्यों की सृष्टि मानव समाज के साथ-साथ हुई इसीलिए मानव समाज में मूल्यों का महत्वपूर्ण स्थान है।"[15] अर्थात मूल्य ही राष्ट्र निर्माण में सहायक होते हैं। मूल्यों की रचना भी मानव द्वारा ही हुई है इसीलिए मनुष्य को सामाजिक प्राणी बनाने में मूल्यों की विशेष भूमिका होती है।

डॉ. राधाकमल मुखर्जी के अनुसार

"मूल्य समाज द्वारा मान्यताएं प्राप्त इच्छाएं और लक्ष्य हैं। जिसका अंतरीकरण सीखने या सामाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से होता है जोकि अधिमान्यताएं तथा अभिभावनाएं बन जाती हैं।"[16] मूल्यों के द्वारा सभी प्रकार की चीज़ों का मूल्यांकन किया जा सकता है। चाहे वह भावनाएं हो या विचार, क्रिया, गुण, वस्तु, व्यक्ति, समूह, लक्ष्य या साधन मूल्यों का एक उद्वेगात्मक आधार होता है। इस आधार पर एक-दूसरे की तुलना में उचित-अनुचित, अच्छा-बुरा, ठीक अथवा गलत माना जाता है।

दिनकर का कहना है कि

"मूल्य वे मान्यताएं हैं जिन्हें मार्गदर्शक ज्योति मानकर सभ्यता चलती रही है।"[17] अर्थात मूल्यों का मानव जीवन में अत्यधिक महत्व है। मूल्य ही सामाजिक संबंधों को संतुलित करके सामाजिक व्यवहारों में एकरूपता स्थापित करते हैं।

डॉ. जगदीश गुप्त का यह कथन

"सभी मूल्य मानव मूल्य हैं चाहे वे नैतिक मूल्य हो, चाहे सौंदर्यापरक मूल्य या कोई और। विशेष अर्थ में मानव मूल्यों का तात्पर्य उन मूल्यों से है जो मानव के आंतरिक सहज स्वरूप के सबसे निकट प्राप्त होते हैं तथा उसके संवेदनात्मक व्यक्तितत्व से अधिक सीधे और गहन रूप से संबंधित होते हैं। उनकी विशेषता इसी में है कि मानवीय संवेदनाओं को उनसे मुक्त रूप में स्वीकृति है। जीवन में उन मूल्यों की प्रतिष्ठा का अर्थ मानवता एवं मानवीयता की प्रतिष्ठा है। उसके बिना मानव अस्तित्व निरर्थक है।"[18] अर्थात मूल्य मानव की कसौटी है। मूल्य जीवन मूल्यों को दिशा निर्देश प्रदान करते हैं। व्यक्ति को लक्ष्य तक पहुंचाते हैं। मूल्य के बिना व्यक्ति का कोई अस्तित्व नहीं है।

भृतहरि के अनुसार

"जिन व्यक्तियों में विद्या, तप, दान का विशेष गुण, धर्म आदि नैतिक गुण नहीं होते, वे लोग धरती पर बोझ स्वरूप हैं और मनुष्य के रूप में पशु ही हैं।"[19] अर्थात व्यक्ति में नैतिक गुण होना आवश्यक है। अगर व्यक्ति इसके विपरीत है तो वह सामाजिक प्राणी कहलाने के लायक नहीं है।

डॉ. प्रभाकर माचवे के अनुसार

"मानवीय क्रियाओं में आचार-व्यवहार में अच्छाई या अशिष्ट का मूल्य क्या है? यही नीतिशास्त्र का विषय है।"[20] अर्थात मूल्य व्यक्तिगत जीवन से उद्धृत होते हैं। इस अवस्था में मानव का आचरण व व्यवहार मूल्यों के द्वारा संचालित होते हैं। व्यक्ति अपना आचरण व व्यवहार तथा आचार-विचार निश्चित करने का प्रयास करता है।

मूल्य के संबंध में पाश्चात्य विद्वानों के मत

हार्टमैन के अनुसार

"मूल्य वास्तव में पहला प्रस्तावक था। जिसके पीछे शक्ति थी 'जो होना चाहिए' जो अस्तित्व का केंद्र है।"[21] अर्थात मूल्य एक ऐसा सिद्धांत है जो प्राप्त इच्छाओं पर आधारित होता है और जिसमें चाहिए, बल्कि भावना निहित रहती है।

जॉन लेयर्ड के अनुसार

"It (value) is an enquiry to qulites useful or agreeable to ourselves or to otners."[22] अर्थात यह मूल्य उन गुणों का अन्वेषण है जो स्वयं के लिए या दूसरों के लिए उपयोगी या स्वीकार्य है। इस प्रकार जॉन लेयर्ड के अनुसार जो गुण कल्याणकारी है वही मूल्य है।

जेसफ एच.फिच्चर के अनुसार

"मूल्य वह मानदंड हैं जो संपूर्ण संस्कृति और समाज को अभिप्राय और सार्थकता प्रदान करते हैं।"[23]

अर्बन के अनुसार

1."जो मानवीय इच्छा की तुष्टि करें वही मूल्य हैं।

2.मूल्य वह वस्तु है जो जीवन को सदैव विकास की ओर ले जाती है।

3.वही अंतिम रूप से तथा स्वलक्ष्य दृष्टि से मूल्यवान है जो कि व्यक्तियों को विकास अथवा आत्मविश्वास या आत्मानुभूति की ओर ले जाती है।"[24]

उपर्युक्त परिभाषा पर विचार करने के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि मूल्य किसी वस्तु के प्रति आकर्षण भाव है। यह वस्तु में न होकर मनुष्य के मस्तिष्क में विद्यमान रहता है जो उसे वस्तु के प्रति आकर्षित करता है। ये व्यक्तिनिष्ठ होते हैं। इनका संबंध मानव और समाज दोनों से है। सही अर्थों में मूल्य वह है जिसके द्वारा मनुष्य अपना जीवन व्यतीत करता है और इससे उसके अस्तित्व की पहचान बनती है।

2.2 मूल्य का स्वरूप

मनुष्य एक क्रियाशील प्राणी है। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए मनुष्य का समाज में क्रिया करना ही मूल्य कहलाता है। मूल्य मानव अस्तित्व का अभिन्न अंग है। जीवन भर मूल्य मानव के साथ-साथ चलते हैं। मूल्यों ने मानव की अन्य जीवो पर श्रेष्ठता को कायम रखा है। मूल्य संस्कृति का ही अंग है और संस्कृति द्वारा स्वीकृत है। मूल्य का स्वरूप आदर्शात्मक है। मूल्य कभी मिटते नहीं

बल्कि यह निरंतर गतिशील और परिवर्तनशील होते हैं। समयानुसार और परिस्थितियों के अनुसार मूल्य परिवर्तित होते रहते हैं। समाज में मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इससे मनुष्य के विकास का आधार माना जाता है। मूल्य ऐसे भाव हैं जिन्हें अनुभव के द्वारा महसूस किया जा सकता है। "इतना ही नहीं मूल्य जीवन एवं समाज की सार्थक कसौटी है। मूल्य निर्माण में व्यक्ति, परिवार, धर्म, राज्य तथा परिवेश का योगदान निर्विवाद स्वीकार्य है। इसके साथ ही एक धारणा यह भी प्रचलित है। मनुष्य अपना कर्ता-धर्ता स्वंय है। अर्थ और मूल्यों का निर्णायक भी वही है।"[25] अर्थात मानव से मूल्यों का गहनतम संबंध स्थापित किया गया है। इसीलिए मानव को समाज से अलग नहीं किया जा सकता। मूल्यों को प्रायः अंतिम लक्ष्य माना जाता है। मूल्यों की प्राप्ति ही मानव का उद्देश्य रहता है। इस अंतिम लक्ष्य की प्राप्ति पर मानव को सुख एवं आनंद की प्राप्ति होती है। ज्ञान एवं इच्छा के प्रति कौतुहल मानव को मूल्यों की प्राप्ति के लिए क्रियाशील रखता है। अतः: मूल रूप से मूल्य साध्य होते हैं। मूल्य हमारे आचार-व्यवहार आदि को निर्धारित करते हैं। यह सामाजिक कल्याण में सहायक होते हैं। मूल्य सर्वप्रथम व्यक्तिगत स्तर तक सीमित रहते हैं। फिर धीरे-धीरे सामाजिक मान्यता प्राप्त कर व्यापक और सर्वग्राही बनते हैं। इसीलिए मूल्यों की सत्ता सार्वभौमिक मानी जाती है। समाज में कोई न कोई मूल्य सभी स्थितियों में अवश्य विद्यमान रहते हैं और मनुष्य सहर्ष ही इनका पालन करता है। यह सही है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व पर सबसे अधिक प्रभाव उसके परिवार का होता है। परिवार में रहते हुए ही व्यक्ति इन आदर्शात्मक मूल्यों को ग्रहण करता है। इसीलिए मूल्य माननीय विकास के पूरक हैं। इनका सीधा संवेदनात्मक संबंध मानव से है। फिर चाहे वह नैतिक हो या दार्शनिक, सामाजिक हो या सौंदर्यात्मक। व्यक्ति की धारणा का मूल्य में विशेष महत्व रहा है। मूल्य व्यक्तिगत स्तर से सामाजिक स्तर तक के पड़ाव से होकर गुज़रता है और अंत में जो परिवर्तन होता है उस पर मानव को आनंद और सुख की अनुभूति होती है। यही आनंदानुभूति मूल्य को विकास की ओर ले जाती है। समाज या राष्ट्र की उन्नति भौतिक संसाधनों पर ही नहीं अपितु उस राष्ट्र के नागरिकों द्वारा विपरीत मूल्यों पर ही आधारित होती है। मूल्य समाज के सदस्यों की आंतरिक भावना पर आधारित होते हैं। मूल्य सामाजिक जीवन को मनोवैज्ञानिक आधार

प्रदान करते हैं जो समाज व्यवस्था संगठन के लिए आवश्यक होता है। युग एवं काल के अनुरूप मूल्यों में परिवर्तन होता रहता है इसीलिए इसकी कोई शाश्वत धारणा नहीं है। मूल्य समाज सापेक्ष हैं। समाज में कार्य व्यवहार द्वारा ही व्यक्ति इन्हें समझ पाता है। इस प्रकार मूल्य को मनुष्य के कार्य व्यवहार के रूप में स्वीकारा गया है परंतु परिस्थितियां बदल रही हैं। व्यक्ति की सोच भी परिवर्तित हो रही है पर इसका एक दुखद पक्ष यह है कि मूल्यों का परिवर्तन मनुष्य को पतन की ओर ले जा रहा है। व्यक्ति अपने प्राचीन आदर्शात्मक मूल्यों को भूलकर पाश्चात्य संस्कृति को अपना रहा है। जिसके कारण मूल्य में विघटन की स्थिति पैदा हो रही है और परिवारिक संबंधों में बहुत भारी परिवर्तन देखा गया है। संबंध प्रेम के स्थान अर्थ पर आधारित हो रहे हैं। अब व्यक्ति के लिए स्वार्थ प्रमुख रह गया है। यह सब तकनीकी विकास का ही प्रभाव है जो हमारे जीवन मूल्यों को परिवर्तित कर रहा है परंतु इन जीवन मूल्यों को विघटन की स्थिति से बचाना अति आवश्यक है। साहित्य के माध्यम से इन मूल्यों को सुरक्षित रखा जा सकता है। इस प्रकार मूल्य चिरकाल तक हमारे समाज में विद्यमान रह सकते हैं।

2.3 मूल्य : समानार्थी शब्द

पिछले कुछ वर्षों से मूल्य के अनेक समानार्थी शब्द प्रचलन में आ रहे हैं। इन शब्दों में मान, प्रतिमान, मानक, मानदंड, आदर्श, नार्म, परंपराएं, वर्जनाएं, नैतिकता, धर्म, दर्शन आदि प्रमुख हैं। यह सर्वमान्य तथ्य है कि मूल्य शब्द सर्वप्रथम अर्थशास्त्र के संदर्भ में ही प्रयुक्त हुआ था लेकिन कालांतर में इस शब्द का अर्थ विस्तार हुआ और समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान, विज्ञान, नीतिशास्त्र आदि के संदर्भ में भी इस शब्द का प्रयोग किया जाने लगा। इस कारण अनेक शब्द मूल्य के समानार्थी शब्दों के रूप में प्रयुक्त होने लगे हैं।

मूल्य और प्रतिमान अथवा मान (Norms)

प्रतिमान शब्द हिंदी के मानदंड, आदर्श नियम, मानक मध्यमान आदि के अर्थ में प्रयोग होता है। डॉ. सारस्वत के अनुसार "मूल्य वस्तुत: वे धारणाएं हैं जिनकी हम सिद्धि चाहते हैं और मानदंड या प्रतिमान वे साधन हैं जिनके द्वारा मूल्यों

की सिद्धि प्राप्त होती है।"[26] प्रतिमान और मूल्य दोनों शब्दों में पर्याप्त समानता होते हुए भी अर्थ भेद है। किसी मूल्य विशेष के पालन के लिए अनेक प्रतिमान हो सकते हैं। उदाहरण के लिए अपनों से बड़ों का आदर सम्मान करना एक व्यापक रूप से स्वीकृत मूल्य है, किंतु इस मूल्य को स्थिति-परिस्थिति, स्तर एवं व्यवसाय आदि की विभिन्नता के अनुसार अनेक प्रतिमानों (जैसे अपने से बड़ों के चरण स्पर्श करना है क्या नमस्कार कहना, उनसे बहस न करना, उनकी उपस्थिति होने पर खड़े हो जाना, उनकी उपस्थिति में हंसी-ठिठौली, मज़ाक न करना आदि के माध्यम से अभिव्यक्त किया जा सकता है। इस प्रकार मूल्य अधिक व्यापक है और किसी एक मूल्य में अनेक प्रतिमान समाहित किए जा सकते हैं। एक ही प्रतिमान में अनेक मूल्य मिल जाते हैं। प्रतिमान, मूल्य निर्माण प्रक्रिया के पूर्व की स्थिति है किंतु मूल्यों के निर्माण के पश्चात उनमें व्यवस्था स्थापित करने का कार्य भी प्रतिमान ही करते हैं। इस आधार पर मूल्य और प्रतिमान अन्योन्याश्रित है। एक-दूसरे से संबंधित हैं, पूरक हैं किंतु पृथक अस्तित्व है। वह स्वतंत्र भिन्न अर्थ रखते हैं।

मूल्य और आदर्श

आदर्श एक मानसिक स्थिति है। आदर्श क्या होना चाहिए? यही मानसिक स्थिति है जबकि मूल्य उस अभीच्छित का अनुभव है। मूल्य आकांक्षा और अभिलाषा की पूर्ति से उत्पन्न आनन्दमूलक स्थिति है। आदर्श और मूल्य के मध्य के अंतर को निम्न शब्दों में व्यक्त किया गया है- आदर्श बने बनाए और स्थिर होते हैं। मूल्य अन्वेषण और परिवर्तनशील होते हैं। मूल्य और आदर्श में सापेक्ष संबंध भी है। व्यक्ति का जीवन के प्रति दृष्टिकोण रूपी मूल्य के अनुरूप 'आदर्श' निश्चित होता है। व्यक्ति द्वारा अंगीकृत किया, आत्मसात किए गए मूल्य ही 'जीवन के आदर्श' बन जाते हैं जैसे कि महात्मा गांधी ने जब सत्य, अहिंसा जैसे विशेष मूल्यों को आत्मसात किया तो यह मूल्य ही उनके जीवन के आदर्श कहलाए। आदर्श स्वयं में एक मूल्य भी है किंतु इसमें समस्त मूल्यों को शामिल नहीं किया जा सकता। भौतिकवादी यथार्थ पर मूल्य आदर्श की परिधि में नहीं आते।

मूल्य और वर्जनाएं (टेबू)

मूल्य के संदर्भ में वर्जनाएं शब्द का प्रयोग भी किया जाता है। समाज में ये रूढ़ि के रूप में चली आ रही हैं। इन वर्जनाओं को समाज में 'नकारात्मक रूढ़ियां' भी कहा जाता है जैसे कि धोखा न देना, चोरी न करना, झूठ न बोलना इत्यादि। इनकी प्रभावशीलता बाहरी नियंत्रण से नहीं बल्कि आंतरिक अनुरोध पर होती है। "मूल्य और वर्जनाओं में मुख्य अंतर उनके सकारात्मक और नकारात्मक दृष्टिकोण को लेकर है। वर्जनाओं को भी व्यक्ति और समाज ने उतने ही आदर के साथ स्वीकार किया है, जितने के साथ मूल्य को करता है। इसीलिए अगर रचनाओं को निषेधात्मक मूल्य कहा जाए तो अनुचित नहीं होगा।"[27] मूल्य और रचनाएं दोनों की सांस्कृतिक विरासत है। मूल्यों में निषेधात्मक और स्वीकारात्मक दोनों पक्ष होते हैं जबकि वचनों में निषेधात्मक तो प्रत्यक्ष रूप में विद्यमान रहता है लेकिन निषेध में भी परोक्ष रूप में स्वीकारात्मकता का भाव होता है जैसे झूठ नहीं बोलना चाहिए, हमें सच बोलना चाहिए का भाव समाहित रहता है। वर्जनाएं शब्द का अर्थ भिन्न होते हुए भी मूल्य निर्माण में इसका महत्वपूर्ण योगदान है।

मूल्य और नैतिकता

मूल्य और नैतिकता को पर्याय मान लिया जाता है क्योंकि यह दोनों समाज हित की भावना से अनुप्राणित हैं। मूल्यों का क्षेत्र नैतिकता से व्यापक है। "नैतिकता के आधार पर प्राप्त किसी भी समाज के मूल्य द्वारा समाज सर्व सुसंस्कृत एवं शांतिमय हो सकता है। इस प्रकार यदि मूल्य लक्ष्य है तो नैतिकता उन्हें प्राप्त करने का मार्ग। इन दोनों के समन्वित रूप की परिणिति 'नैतिक मूल्यों' में होती है।"[28] नैतिकता और मूल्य में साम्यता होने के बावजूद दोनों में पर्याप्त अंतर है। व्यक्ति के व्यक्तिगत मूल्य अच्छे या बुरे हो सकते हैं किंतु नैतिकता सदैव अशुभ की ओर संकेत करती है। मूल्य व्यक्ति के चिंतन, मनन और विवेक सम्मत जीवन दृष्टि से संबंधित होते हैं, किंतु नैतिकता व्यक्ति के आचरण कर्तव्यनिष्ठा का फल होती है।

मूल्य और पुरुषार्थ

मूल्य के पर्याय के रूप में भारतीय चिंतन धारा में जीवन मूल्यों के लिए 'पुरुषार्थ' शब्द प्रयुक्त हुआ है। पुरुषार्थ का अर्थ है- प्रयत्, प्रयत्न से जीवन के उद्देश्य की पूर्ति होती है। यह उद्देश्य है- धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। इन्हें पुरुषार्थ चतुष्टय भी कहा जाता है। भारत में प्राचीन काल से ही मूल्य विषयक धारणा पुरुषार्थ चतुष्टय के रूप में विद्यमान रही है। डॉ. गौरीशंकर भट्ट के अनुसार "पुरुषार्थ वस्तुतः एक साधना है जिसमें धर्म के आधार पर अर्थ तथा काम की साधना करते हुए पारलौकिक जीवन को साधने का प्रयास निहित है। पुरुषार्थ अभ्युदय और निःश्रेयस की साधना का माध्यम है।"[29] वास्तव में भारतीय चिंतकों द्वारा दिया गया शब्द पुरुषार्थ मूल्य का पर्याय ही है। भारतीय चारों लक्ष्य अपने में मनुष्य जीवन की संपूर्णता का संकल्प ओढे सर्वथा पूर्ण विचारधारा है। स्पष्ट है कि चारों पुरुषार्थ साधना भी है और साध्य भी है। इनमें से किसी एक की भी अनुपस्थिति से जीवन विश्रृंखल हो जाता है।

मूल्य और धर्म

धर्म को भी मूल्य का पर्याय माना जाता है। धर्म से मनुष्य में सत्य, असत्य का विवेक जागृत होता है और वह सत्यान्वेषी या मूल्यान्वेषी बनता है। "धर्म ने मनुष्य को सामाजिक हितों के लिए व्यक्तिगत स्वार्थों के बलिदान की प्रेरणा दी और प्रेम, सहानुभूति, करूणा आदि भावनाओं को बद्धमूल कर, मानव मूल्यों की आधारशिला रखी।"[30] मूल्यों का मूल आधार ही मनुष्य के जीवन का उत्कर्ष करना है। न्याय, प्रेम, आस्था, मानवीय समता जैसे निरंतर मूल्यों को लेकर चलने वाले धर्म में ही मानव जीवन का साफल्य है। धर्म जीवन का सुसंस्कार, जीवन की गति एवं विकास का परिचायक है। धर्म वह मूल्य है जो मानव मात्र के कल्याण भावना से युक्त होता है और उच्चतम मूल्यों का केंद्र है।

मूल्य और संस्कृति

मानव जीवन उसके आचार-व्यवहार, चिंतन, गुण, विशेषता और सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित होता है। मूल्य और संस्कृति परस्पर घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं। "संस्कृति एक ऐसा चरम मूल्य है जिसमें मानवता का बोध समाविष्ट है।"[31] मूल्य जहां मनुष्य के जीवन को सुसंस्कृत बनाकर उत्तम रूप प्रदान करते हैं,

वही संस्कृति भी जीवन में सुचारूता लाकर जीने योग्य बनाती है। बाहरी रूप में दोनों में भले ही अंतर हो किंतु आंतरिक रुप में यह एक-दूसरे के पूरक ही हैं। वस्तुत: "मूल्य ही संस्कृति के पूर्ण बुद्धिगम्य, व्यापकार्थ का आधार है क्योंकि सभी संस्कृतियों का वास्तविक विन्यास मुख्यत: मूल्यों के संदर्भ में ही किया जाता है। संस्कृति बिना मूल्य संदर्भ के अर्थहीन तत्वों का गठन बन जाती है जो स्थानीय एवं क्षणिक होते हैं।"[32] इस प्रकार स्पष्ट है कि मूल्य ही संस्कृति की नींव या बुनियाद होते हैं। मूल्यों को अपनाकर और क्रियान्वित कर के ही मनुष्य सुसंस्कृत कहलाता है।

मूल्य और गुण

व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं आचरण की विशेषताओं को गुण शब्द से अभिहित किया गया है। वस्तुतः गुण शब्द दो पक्षों में प्रयुक्त होता है। सत्य, अहिंसा, साहस, दया, सहानुभूति, प्रेम, परोपकार, सहनशीलता आदि गुण है जबकि चोरी, झूठ, आदि दुर्गुण है। मानवीय गुणों को ज्ञान द्‌वारा अर्जित किया जाता है। इसी आधार पर व्यक्तित्व और चारित्रिक उत्थान होता है। गुण और मूल्य दोनों में ज्ञान है। विवेक की अनिवार्यता होती है फिर भी दोनों में सूक्ष्म अंतर होता है। सभी मानवीय गुणों को मानवीय मूल्य माना जा सकता है पर सभी मानवीय मूल्य गुण नहीं हो सकते। मानवीय मूल्य व्यक्ति और समाज सापेक्ष होते हैं जबकि मानवीय गुण व्यक्ति सापेक्ष होते हैं। मूल्य समाज द्‌वारा प्रदत मान्यता है जबकि गुण को देवी एवं अर्जित संपत्ति माना जाता है। अत: स्पष्ट है कि मूल्यों और गुणों में अंतर होते हुए भी मानव हित के कारण दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं।

तथ्य, अभिवृत्ति, उपयोगिता सिद्धांत और मूल्य

मूल्यों के संदर्भ में प्राय: तथ्य, अभिवृति, उपयोगिता और सिद्धांत जैसे शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है। तथ्य का अर्थ यथार्थ एवं वास्तविकता है। अतः तथ्य का संबंध वास्तविकता से ही है। वही मूल्य का संबंध आदर्श से होता है। कुछ मनोविज्ञानवेता तथा समाजशास्त्री अभीवृत्तियों के आंतरिक स्वरूप को मूल्य मान बैठे हैं किंतु वास्तव में ऐसा कम ही होता है। माननीय अभिलाषाओं में से

संकलित सुंदर, आकर्षक तथा संपूर्ण जीवन के लिए महत्वपूर्ण अभिवृत्तियां, नार्म बनने की प्रक्रिया से गुजरती हुई मूल्य का रूप धारण कर लेती हैं। 'प्रगैमेटिक' विचारधारा के अनुसार "मूल्य उपयोगिता का समानार्थी है। इस अर्थ में वह अर्थशास्त्र के मूल्य सिद्धांत के बहुत निकट आ जाता है। भौतिक जगत में मूल्य का संबंध उपयोगिता से है। इस सिद्धांत के विचारक मूल्य की विषयनिष्ठा को समाप्त कर केवल वस्तुनिष्ठता पर बल देते हैं जो उचित नहीं है।"[33] डॉ. नगेंद्र ने "आदर्श, मानक और सिद्धांत शब्दों को मूल्य के निकटवर्ती माना है। जिसका सापेक्षिक अर्थ विश्लेषण मूल्य के स्वरूप निर्धारण में सहायक हो सकता है। यह शब्द मूल्य के बहुवचन अर्थात मूल्यों के संदर्भ में कभी व्यापक रूप में प्रस्तुत किए जाते हैं।"[34] स्पष्ट है कि मूल्य शब्द व्यापक है। प्राचीन शास्त्रों के अनुसार पुरुषार्थ को इसका पर्याय माना जा सकता है क्योंकि मूल्य स्थिति, समय, समाज एवं व्यक्ति सापेक्ष होते हैं। इस कारण परिवर्तनशील भी हैं। मूल्यों के बारे में आज तक कोई निश्चित धारणा नहीं बन पाई है। ऐसा करने से मूल्यों को जड़वत् मानना होगा। परिवर्तन प्रकृति का मूल है। मूल्य शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम अर्थशास्त्र के संदर्भ में ही हुआ था। धीरे-धीरे इसकी परिधि विस्तृत होती गई। भिन्न-भिन्न संदर्भों से जुड़ने के कारण यह अनेकार्थक भी हो गया। इस शब्द के अर्थ के संदर्भ में अधिक सतर्कता अपेक्षित है।

2.4 मूल्य विभिन्न शास्त्रों की दृष्टि से

मूल्य अर्थशास्त्र, दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र, नीतिशास्त्र, मनोविज्ञानशास्त्र आदि कई रूपों में समाज को प्रभावित करता रहा है। अत: साहित्य में प्रयोग से पहले मूल्य के विभिन्न शास्त्रों ने भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण के अनुसार व्याख्या की है:-

2.4.1 समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण

समाज के सामूहिक प्रयासों का परिणाम ही मूल्य है। मूल्यों में समाज कल्याण की भावना शामिल रहती है। जिस कारण समाज मूल्यों को धीरे-धीरे मान्यता देता है और व्यक्ति उन मान्यताओं के अनुसार मूल्यों का पालन करता है। मनुष्य का स्वभाव और समाज इतना जटिल होता जा रहा है कि इसे समझने के लिए समाजशास्त्रियों की आवश्यकता अनुभव होने लगी है। समाजशास्त्री

मूल्य को संस्कृति की देन मानते हैं। इस दृष्टि से मूल्य संस्कृति के अंग के रूप में विख्यात है तथा मनुष्य की सामाजिक आवश्यकताएं समाज द्वारा स्वीकृत मूल्यों से ही पूर्ण हो सकती हैं। समाजशास्त्रियों के विचारानुसार मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के कारण परस्पर संबंध एवं सहयोग की भावना रखता है। जिस कारण वह युगों से समाज के साथ जुड़ा हुआ पाया गया है। अतः मूल्यों का जितना महत्व अन्य शास्त्रों में है, उसी से कहीं अधिक समाजशास्त्र में। समाज के बिना मूल्यों की कल्पना करना असंभव है। हमारे मूल्यों एवं मान्यताओं का विकास मानव की सामाजिक संरचना के विकास के साथ गहन रूप से जुड़ा हुआ है। मूल्यों का स्थायी रहना भी समाज पर ही निर्भर करता है। सामाजिक मूल्य द्वारा व्यक्ति अपना जीवन निर्दिष्ट मार्ग पर चलाता है। जब यह मूल्य उसके लिए अप्रासंगिक हो जाते हैं तो वह व्यक्तिगत रूप से ही नहीं, सामूहिक रूप से उनसे टक्कर ले लेता है। जिससे नए मूल्यों का उदय होता है। प्राय: हम देखते हैं कि समाज में मानव एक-दूसरे के साथ अपने सामाजिक व्यवहार द्वारा महत्वपूर्ण ढंग से संबद्ध है। व्यक्ति का व्यक्ति से, समूह का समूह से जो संबंध होता है वह सामाजिक मूल्य द्वारा नियंत्रित एवं निर्दिष्ट होता रहा है। समाज के मूल्य को जाने पहचाने बिना आपसी संबंधों का महत्व नहीं है। प्रत्येक समाज का संचालन मूल्य और नियमों द्वारा होता है। इन मूल्यों को एक व्यक्ति को ही नहीं, बल्कि सभी व्यक्तियों को अपनाना पड़ता है। इसीलिए इन मूल्यों से मानव का व्यवहार भी प्रभावित होता है। बदलते परिवेश में मानव, मूल्यों का विकास करता है। जिससे सामाजिक संबंध विकसित होते हैं, बढ़ते हैं एवं सुधरते हैं तथा कई बार अलगाव के समय में भी मानव को मानव के साथ बांधते हैं। प्रत्येक विचारधारा का आधार समाज ही होता है। समाज ही मूल्यों का मुख्य स्रोत है क्योंकि मानव समाज में ही विकसित होता है। इसलिए अनेक समाजशास्त्रियों ने मूल्यों के संबंध में अपने विचार व्यक्त किए हैं। उनके अनुसार मूल्य समाज से पूर्ण रूप से संबंधित हैं। समाजशास्त्र शब्दकोश में मूल्य शब्द को इस प्रकार व्यक्त किया गया है "मूल्य किसी वस्तु के विश्वास करने योग्य शक्ति है जो मानव की इच्छा को संतुष्ट करें। वस्तु का गुण जो किसी व्यक्ति एवं समूह की रूचि का कारण बने हैं। एक मनोवैज्ञानिक वास्तविकता है तथा अब तक निर्मित साधनों द्वारा मापने योग्य नहीं है। इसे उपयोगिता से

अलग किया जा सकता है क्योंकि इसकी वास्तविकता मानव मस्तिष्क में है। मूल्य स्पष्ट रुप से विश्वास का विषय है। एक वस्तु जिसको उपयोगिता के स्तर पर ग्रहण नहीं किया जा सकता, तब तक वही मूल्य ग्रहण करेगी और प्रमाणिक अनुभव होगा, जब तक भ्रम दूर न हो जाए। अंतिम मूल्य स्वयंसिद्ध है और मानवीय प्रकृति में अंतर्निहित है। उनके अस्तित्व को सामाजिक एवं अन्य वैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा जाना जा सकता है परंतु न तो उनकी प्रमाणिकता और न ही औचित्य दर्शाया जा सकता है। वह इसी समय समस्त चेतन तार्किक व्यवहार के प्रेरणा के अंतिम स्रोत हैं।"[35] मानव अपने विवेक द्वारा मूल्यों को निर्मित करता है जो उसके जीवन को सही दिशा देने में समर्थ होते हैं। मानव स्वयं ही मूल्यों का अन्वेषण करता है, मूल्यों का संरक्षण करता है तथा मूल्यों का चयन करता है अर्थात मानव पूर्ण रूप में मूल्यों से बंधा है। वह इनसे हटकर बिल्कुल नहीं चल सकता।

मूल्य वस्तुतः उचित एवं महत्वपूर्ण के प्रति अनजान मान्यताएं हैं। कुछ मूल्यों का समूह प्रत्येक संस्कृति के केंद्र में निहित रहता है। किसी भी संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषताएं आधारभूत मूल्यों का प्रतिबिंब होती हैं। लियोनार्ड के अनुसार "वस्तु या व्यवहार जो अच्छे-बुरे, वांछनीय या तदस्वरूप है के प्रति विचार को मूल्य कहा जा सकता है।"[36] व्यक्तियों के एक समूह द्वारा जो विचार ग्रहण किए जाते हैं तथा किसी भी स्थिति में अधिमान्यताओं की ओर संकेत करते हैं मूल्य माने जाते हैं अर्थात विचार ही मूल्य हैं जो अच्छे-बुरे किसी भी वस्तु के प्रति वांछनीयता को निर्दिष्ट करता है तथा व्यक्ति या समूह द्वारा धारण किया जाता है। राजकमल मुखर्जी ने "मूल्य को समाज द्वारा स्वीकृत इच्छाएं तथा लक्ष्य माना है। जिनका आंतरिकरण सीखने, परिस्थिति या समाजीकरण के माध्यम से होता है जो आंतरिक मान्यताएं, प्रतिमान तथा प्रेरणा बन जाते हैं। मुखर्जी भी इच्छा और लक्ष्यों को अधिक महत्व देते हैं परंतु इच्छाएं महत्वपूर्ण हो।"[37] इस प्रकार मूल्य समस्त समूहों, सामाजिक संबंधों, संस्कृतियों और आत्मा को यह सामाजिक प्राणी के रूप में मनुष्य को सच्चा अर्थ प्रदान करते हैं।

ब्रोनोवस्की ने मूल्य को एक ऐसा विचार माना है जो हमारे समाज में व्यवहार के कुछ स्वरूपों को एक-दूसरे से बांध देता है। डोरोथी ली ने मूल्य शब्द को स्पष्ट करते हुए कहा है- "मानवीय मूल्यों द्वारा मूल्य या मूल्य पद्धति द्वारा

मेरे अनुसार व्यक्ति एक बार की अपेक्षा दूसरे का चयन करता है जो अच्छा या बुरा, उचित या अनुचित के रूप में देखा जा सकता है।"[38] संस्कृति और मूल्यों को एक-दूसरे से गहरे रूप में जोड़ा गया है। इस प्रकार मूल्य सामाजिक और वैज्ञानिक क्रिया द्वारा उत्पन्न होते हैं। हैरी एम.जॉनसन ने मूल्यों की परिभाषा दी है "मूल्यों को मानदंड या धारणा, सांस्कृतिक या मात्र वैयक्तिक रूप में परिभाषित किया जा सकता है। जिसके द्वारा चीज़ों की एक-दूसरे से तुलना की जाती है, स्वीकृत किया जाता है या अवांछनीय किया जाता है, उन्हें एक-दूसरे की तुलना में वांछनीय या अवांछनीय, अधिक सुंदर या कम, अधिक, ठीक या कम समझा जाता है।"[39]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सभी समाजशास्त्री भिन्न-भिन्न परिभाषाएं देने के बाद भी कुछ एक बातों में साम्य रखते हैं। लगभग सभी विद्वान मूल्यों को समाज से पूर्णतः संबंधित करते हैं तथा उन्हें ऐसे विचार या धारणाएं, मान्यताएं या प्रतिमान मानते हैं जो मानव द्वारा वांछनीय हो तथा जो सुंदर-असुंदर, उचित-अनुचित, सुख-दुख की अच्छे ढंग से जानकारी दे सकें। वास्तव में मानव ही मूल्यों का निर्माता है, उनका संरक्षक है तथा उनका चयन भी उसी के द्वारा होता है। इस प्रकार मूल्य समाज के अभिन्न गुण है।

2.4.2 अर्थशास्त्रीय दृष्टिकोण

मूल्य शब्द का संबंध अर्थशास्त्र से है। जहां मूल्य का अर्थ अर्थशास्त्र में किसी वस्तु के प्रति मनुष्य का आकर्षण भाव या धन त्याग की तत्परता से है। अर्थशास्त्र में मूल्य वस्तु की आवश्यकता पर अधिक बल देता है। अर्थशास्त्री मूल्य को वस्तुओं के आदान-प्रदान या वस्तु विनिमय मानते हैं। उनके अनुसार मूल्य आर्थिक, सामाजिक संबंधों में आया बदलाव है। किसी वस्तु का बाज़ार में आसानी से मिल जाना इसके मूल्य को कम कर देता है परंतु जब वही वस्तु आवश्यकता पड़ने पर न मिले तो वह उसके मूल्य को बढ़ा देता है। अत: मूल्य वस्तुओं के मूल्यांकन का एकमात्र प्रतिमान है। अर्थशास्त्रियों के विश्लेषण से मूल्यों के अध्ययन में सहयोग अवश्यंभावी है। अर्थशास्त्र में मूल्य दो बातों अथवा तत्वों पर निर्भर करता है। वस्तु की आवश्यकता जीवन में कितनी है और उसकी दुर्बलता कितनी कठिन है। जब कोई वस्तु बाज़ार में आसानी से प्राप्त हो

जाए तो उस वस्तु का मूल्य उतना ही कम हो जाता है तथा उस वस्तु की आवश्यकता पड़ने पर कठिनता से मिलना उसके मूल्य को उतना ही बड़ा देता है। प्राचीन काल में क्रय या मुद्रा के प्रचलित होने से पूर्व एक वस्तु के बदले में दूसरी वस्तु ली जाती थी अर्थात वस्तुओं का आदान-प्रदान होता था। इसे वस्तु विनिमय कहा जाता था। आजकल भी अविकसित देशों में वस्तु विनिमय होता है किंतु अधिकतर विनिमय द्रव्य द्वारा ही होता है। इस प्रकार की प्रणाली आर्थिक विकास के प्रधान युग में ही संभव थी। जब जीवन बड़ा ही साधारण था, मनुष्य आत्मनिर्भर था तथा उसे बहुत ही कम वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती थी परंतु जब जीवन स्तर बढ़ने लगा तो मानव ने अपनी आवश्यकता की पूर्ति उन वस्तुओं में असंभव पाई। अतः उसको मुद्रा का निर्माण करना पड़ा। अर्थशास्त्र से ही मूल्य शब्द गणितशास्त्र, नीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र और मनोविज्ञान के क्षेत्र में पहुंच गया। जहां उसे विस्तृत अर्थ प्रदान किया गया।

गणितशास्त्र की संपूर्ण प्रणाली मूल्यों के शोध पर ही आधारित है। वहां प्रत्येक स्थिति में मूल्य को ही ज्ञात किया जाता है। यही नहीं वास्तविक मूल्य को प्राप्त करने के लिए काल्पनिक मूल्य की स्थापना की जाती है। स्थूल अंकों में जोड़-तोड़ की सूक्ष्म सत्ता निहित होती है जिनको ज्ञात कर हम आत्मतुष्टि का अनुभव करते हैं परस्पर तुलना करते हैं और मान निर्धारित करते हैं। इस प्रकार अर्थशास्त्रियों के मतों का निचोड़ यह है कि किसी वस्तु का मूल्य मांग और पूर्ति के संतुलन की अवस्था में उस वस्तु के बदले में प्राप्त होने वाला पदार्थ है। यह पदार्थ मुद्रा भी हो सकती है और कोई अन्य वस्तु भी। श्रम, माननीय श्रम इस मूल्य के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हालांकि अर्थशास्त्र में मूल्य, समाजशास्त्र आदि में उल्लेखित मूल्य, जीवन मूल्य से कुछ पृथक हैं तथापि उस अवधारणा से मूल्यों के अध्ययन में पर्याप्त सहायता मिलती है।

2.4.3 मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

मनोविज्ञान शास्त्र में मूल्य को एक पृथक रूप में ही समझा गया है। मनोविज्ञान का साधारण अर्थ मानव मन का अध्ययन करना है। मनोविज्ञान व्यक्ति के मानसिक क्रियाओं का विश्लेषण करता है। जिस कारण व्यक्ति समाज में विचरण कर पाता है। इस दृष्टि से मनोविज्ञान व्यक्ति और समाज का पता

लगाता है। मनोवैज्ञानिक मूल्य का संबंध व्यक्ति की इच्छाओं से जोड़ते हैं। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार जब किसी व्यक्ति की चेतना का संबंध दूसरी चेतना से होता है तो विभिन्न प्रकार के मूल्यों की उत्पत्ति होती है। मूल्यों की उत्पत्ति ही व्यक्ति को सामाजिक परिवेश से जोड़ती है। एरिक फ्राम के अनुसार "मूल्य मनुष्य के अस्तित्व संबंधित स्थितियों के मूल में होते हैं इसीलिए इन दिशाओं का ज्ञान तथा मनुष्य की स्थिति का परिचय हमें इन मूल्यों के सृजन की ओर ले जाता है। जिनमें वैश्विक यथार्थता होती है। यह केवल मनुष्य के अस्तित्व के साथ ही रहती हैं। उसके बाहर कोई मूल्य नहीं है।"[40] ऑलपोर्ट मानते हैं की "मूल्य सामान्य उद्देश्य है। मूल्य का सामान्य उद्देश्य अनुभवाश्रित है। द्रष्टा के द्वारा यह आरोपित नहीं होता। मनुष्य जैसे संतुष्टि प्राप्त करता है, तदनुकूल सामान्य अवधारणा का उसमें विकास हो जाता है तथा उसकी प्राप्ति के लिए विभिन्न वस्तुओं को विभिन्न स्थितियों में ढूंढता है। यदि ऐसा नहीं होता तो उसे मूल्य नहीं कहा जा सकता। आलपोर्ट तथा अन्य मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि मनुष्य में ऐसी सामान्य प्रवृतियां होती हैं।"[41] इनके विचार बहुत कुछ स्प्रेगेर के अध्ययन पर आधारित हैं। प्रायः यह देखा गया है कि एक वस्तु किसी व्यक्ति समूह के लिए मूल्यवान प्रतीत हो सकती है, दूसरे व्यक्ति समूह के लिए वही वस्तु मूल्यवान प्रतीत नहीं हो सकती परन्तु निर्भर इस बात पर करता है कि उस वस्तु पर कौन सा मूल्य रखा गया है? इस प्रकार गोल्डन स्टाइन के अनुसार "मूल्य की निश्चित प्रकृति के निर्धारण में अधिकांश कठिनाई का मूल स्रोत ऐसी मान्यताएं हैं जिनके अनुसार मूल्य वस्तु, घटना, क्रिया व्यक्ति आदि में अंतर्निहित नहीं, स्वीकार किया जाता है बल्कि उसे ऐसे तथ्य जैसे धर्म, वैज्ञानिक व सामाजिक विश्वासों द्वारा निर्धारित करने की चेष्टा की गई है। इन विश्वासों की स्वच्छंदता, अस्पष्टता और अनिश्चिशतता मूल्य निर्णयों में परिभाषित होती है।"[42] इस प्रकार मनोवैज्ञानिक अनुभवातीत 'अहं' की मान्यता स्वीकार नहीं करते तथा आलपोर्ट के शब्दों में जीवन के चिरस्थाई ढंग का ही आधारभूत मूल्य स्वीकार करते हैं। उनका दृष्टिकोण व्यक्ति को 'संपूर्ण मनुष्य' के रूप में देखने का है।

2.4.4 दार्शनिक दृष्टिकोण

जीवन के वास्तविक सत्य को देखना ही दर्शन है। यह जीव जगत एवं प्रकृति के साथ-साथ मानव तथा मानवीय मूल्यों पर भी बल देता है। मानव का अस्तित्व और मूल्य दोनों प्राचीन धारणाएं हैं जो दर्शनशास्त्र के अंतर्गत आते हैं। हमारा जीवन वस्तुओं को उचित-अनुचित तथा कुछ अच्छे स्तर के मूल्यों को जानने के लिए बाध्य है। हम किसी भी दृश्य को सुंदर-असुंदर, किसी भी कार्य को सही-गलत, किसी भी चीज़ को उचित-अनुचित कह सकते हैं। वास्तव में कोई भी वस्तु बुरी एवं अच्छी नहीं होती बल्कि हमारा अनुभव उसे इस प्रकार का बना देता है। प्रत्येक व्यक्ति मूल्य भावना रखता या अनुभव करता है, कोई भी समूह मूल्य पद्धति से अलग नहीं रह सकता। यदि हम अपने लिए मूल्यों का चयन स्वयं नहीं कर सकते तब उस समय हमारे मित्र, कुछ आंतरिक शक्तियां हमारे लिए मूल्यों का चुनाव करती हैं जो एक तरह से हमारा निर्णय भी बन जाता है।

2.5 मूल्य का विभाजन

भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने मूल्य शब्द को अपने-अपने दृष्टिकोण से परिभाषित व वर्गीकृत किया है। मूल्य शब्द के अर्थ और स्वरूप में भिन्नता होने के कारण मूल्यों के वर्गीकरण में भी स्वाभाविक रूप से भिन्नता देखने को मिलती है। दृष्टिकोण के भेद के अलावा आवश्यकता, कारण और परिवेश की भिन्नता के कारण भी मूल्यों के वर्गीकरण के स्थाई आधार में भिन्नता पाई जाती है। मूल्य भेद समाज के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़ा हुआ है जैसे कि सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि। मूल्यों को प्रमुखतः लक्ष्य, विषय, संरचना, महत्व आदि के आधार पर विभाजित किया जाता है। मूल्यों की व्यापकता के कारण इन्हें अध्ययन की सुविधा हेतु वर्गीकृत करना आवश्यक हो जाता है। फिर भी कोई भी मूल्य वर्गीकरण पूर्णरूप से वैज्ञानिक नहीं माना जा सकता। मूल्य वर्गीकरण के कई आधार हैं और विभिन्न विद्वानों ने मूल्य वर्गीकरण के विषय में अपने-अपने तर्क प्रस्तुत किए हैं। दार्शनिक प्रयास मूल्यों के दो भेद मानते हैं- अंतवर्ती मूल्य और बहिवर्ती मूल्य।

अंतवर्ती मूल्य साध्य मूल्य होते हैं। अंतवर्ती मूल्य, अंतिम मूल्य होते हैं। इनको प्राप्त कर लेना ही अंतिम लक्ष्य होता है जबकि बहिवर्ती मूल्य, अन्य मूल्यों की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होते हैं।

बहिवर्ती मूल्य में उन मूल्यों को शामिल किया जाता है जो एक मूल्य की प्राप्ति के बाद अन्य मूल्यों की प्राप्ति की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा देता है।

भारतीय दृष्टिकोण

भारतीय पौराणिक परंपरा के अनुसार मूल्यों को चार भागों में बांटा गया है- धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। ब्रहमाचार्यश्रम के अनुसार "धर्म जीवन का अत्यधिक शक्तिशाली पुरुषार्थ है। धर्म जीवन का सार है। धर्म का संबंध आचार-नीति से अधिक है। मोक्ष अथवा पूर्णता की खोज से कम।"[43] धर्म मनुष्य को ईश्वर या अनुभूति के दर्शन कराता है। मनुष्य के कर्तव्य व्यवहार को धर्म नैतिकता प्रदान करता है। धर्म मनुष्य को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाता है। जहां पहुंचकर उसे सुख की अनुभूति होती है। अतः धर्म मनुष्य के चरित्र को उत्कृष्टता प्रदान करता है। अर्थ से अभिप्राय भौतिक सुख-संपदा से लिया जाता है। अर्थशास्त्र के अनुसार अर्थ का संबंध उन वस्तुओं से है जिसकी उपयोगिता अर्थात Utility हो। वेदों में अर्थ का अभिप्राय उन वस्तुओं से है जो गृहस्थी चलाने में, परिवार बसाने या धार्मिक क्रिया व्यापारों में सहायक हैं। भारतीय दृष्टिकोण के अनुसार 'काम' तीसरा मूल्य है। डॉ. श्रीमती प्रेम सिंह के अनुसार "काम दैहिक भूख है। काम संबंध क्षणिक प्रक्रिया है।"[44] काम से तात्पर्य उन एषणाओं से है जो मानव में भोग और जीवन तथा इंद्रियों की तुष्टि के लिए होती है। प्राकृत आवेग मूल-प्रवृत्तियों, मानव ऐषणाएं और मानव की प्राकृत मानसिक प्रवृतियां काम के अंतर्गत आ जाती हैं। मोक्ष जीवन का अंतिम मूल्य है। इसका अन्य तीन मूल्यों से अत्यधिक महत्व है। मोक्ष मनुष्य के समस्त प्राप्तियों के द्वार खोल देता है। विभिन्न जीवन मूल्य में से मोक्ष का अपना अत्यधिक महत्व है। मोक्ष प्राप्ति ही मानव जीवन का लक्ष्य है। मोक्ष पाकर मनुष्य सब बंधनों से छूट जाता है। मोक्ष मनुष्य को ईश्वरीय अनुभूति का ज्ञान कराती है।

मानविकी परिभाषिक कोश में मूल्यों के निम्नलिखित चार प्रकार बताए गए हैं:-

1."आनंदमूलक मूल्य 2. सांस्कृतिक मूल्य
3.कलात्मक मूल्य 4. नैतिक अथवा धार्मिक एवं व्यवहारिक मूल्य।"[45]

रमेशचंद्र लवानिया ने मूल्यों को छ: भागों में विभाजित किया है:-

1.''वैयक्तिक मूल्य 2.भौतिक मूल्य
3.समष्टिगत मूल्य 4. नैतिक मूल्य
5.आध्यात्मिक मूल्य 6.सौंदर्यगत मूल्य।"[46]

गोविंदचंद्र पांडे ने मूल्यों के साथ प्रकार बताए हैं:-

1."व्यवहारिक मूल्य 2.आदर्श मूल्य
3.परमार्थिक मूल्य 4.राजनीतिक मूल्य
5.सात्विक मूल्य 6.नैतिक मूल्य
7.सौंदर्यात्मक मूल्य।"[47]

गोविंदचंद्र पांडे ने मूल्य के इस वर्गीकरण को सूत्रात्मक शैली में दर्शाया है। उनके अनुसार मूल्यबोध में द्वंदात्मक बोध का समावेश है। जिस कारण व्यक्ति और समाज का आपस में गहरा संबंध है।

डॉ. हुकमचंद राजपाल ने मूल्य के चार भेद स्वीकार किए हैं:-

1."भौतिक मूल्य 2.मानसिक मूल्य या मनोवैज्ञानिक मूल्य
3.सामाजिक मूल्य 4.आध्यात्मिक मूल्य।"[48]

डॉ. हुकुमचंद राजपाल ने मूल्यों के इस वर्गीकरण में मानव जीवन का महत्व और उसकी अनिवार्यता को पेश किया है।

पाश्चात्य दृष्टिकोण :-

मूल्यों के वर्गीकरण के विषय में पाश्चात्य विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत रहे हैं।

प्लेटो ने मूल्यों का वर्गीकरण निम्नलिखित अनुसार किया है:-

1."सत्य 2.शुभ 3.सुंदर।"[49]

क्लोरेंस एस.केस ने मूल्यों का विभाजन इस प्रकार किया है:-

1."सावयवी मूल्य 2.विशिष्ट मूल्य
3.सामाजिक मूल्य 4.सांस्कृतिक मूल्य।"[50]

जॉर्ज एडविन प्यू ने मूल्य के तीन प्रकार माने हैं:-

1."स्वनिष्ठ मूल्य अथवा शारीरिक मूल्य (सेल्फिश मूल्य)

2.सामाजिक मूल्य (सोशल वैल्यूज)
3.बौद्धिक मूल्य (इंटेलेक्चुअल वैल्यूज)।"[51]

पाश्चात्य विचार अर्बन ने मूल्यों के आठ भेद किए हैं:-

1."शारीरिक मूल्य 2.आर्थिक मूल्य
3.मनोरंजनात्मक मूल्य 4.सामाजिक मूल्य
5.चरित्रात्मक मूल्य 6.सौंदर्यात्मक मूल्य
7.बौद्धिक मूल्य 8.धार्मिक मूल्य।"[52]

मूल्य संबंधी उपयुक्त विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि पाश्चात्य दर्शनशास्त्र तथा पाश्चात्य विद्वान नैतिक मूल्यों पर ही अधिक बल देते हैं। मूल्यों के वर्गीकरण में पाई जाने वाली विभिन्नताओं का कारण मूल्य विभाजन में पाए जाने वाली विभिन्नताएं हैं। प्रत्येक विचारक ने अपनी बौद्धिक दृष्टि और सुविधा की दृष्टि से मूल्यों का विभाजन किया है किंतु सभी विचारकों ने अपनी-अपनी दृष्टि के अनुसार मूल्यों के किसी एक पक्ष पर ही बल दिया है। डॉ. रमेश देशमुख मूल्यों को दो वर्गों में विभाजित करते हैं। "प्रथम- शाश्वत मूल्य, द्वितीय- परिवर्तनीय मूल्य।"[53]

शाश्वत मूल्यों को स्थिर मूल्य भी कहते हैं लेकिन कुछ मूल्यों में समय के साथ-साथ परिवर्तन आता है। इन्हें साध्य मूल्य भी कहा जाता है। ऐसे मूल्यों में प्रेम, अहिंसा, दया, तप, त्याग, समर्पण, वात्सल्य, मातृत्व, मातृप्रेम आदि आते हैं। यह मूल्य नैतिक एवं सौंदर्य मूल्यों में अपनी पृथक सत्ता रखते हैं। नैतिकता एवं सामाजिक एक-दूसरे के पूरक हैं। अर्बन के वर्गीकरण को आधार बनाकर मोहिनी शर्मा ने मूल्यों का वर्गीकरण निम्नलिखित अनुसार किया है:-

क) "जैविक मूल्य (शारीरिक मूल्य)
  अ) स्वरक्षापरक मूल्य
    1) जिजीविषा संबंधी मूल्य
    2) भूख संबंधी मूल्य
  आ) काम तुष्टि पर्क मूल्य
ख) पराजैविक मूल्य (सामाजिक मानविकी मूल्य)
  अ) सामाजिक

1) पारिवारिक एवं स्त्री-पुरुष संबंधी
2) जातीय एवं सांप्रदायिक
3) आर्थिक 4) राजनैतिक एवं राष्ट्रीय

आ) मानविकी मूल्य

1) दार्शनिक 2) धार्मिक
3) शैक्षणिक 4) साहित्यिक एवं कलात्मक।"[54]

इस प्रकार मूल्यों को लक्ष्य, स्थायित्व, विषय, चिंतन प्रक्रिया आदि के आधार पर विभाजित किया गया है। इनका अध्ययन करने के पश्चात यह स्वंय ही स्पष्ट हो जाता है कि परंपरागत भारतीय चिंतन धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आत्मिक विकास से संबंधित मानव जीवन की सर्वांगीण आवश्यकताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह भारतीय मूल्यों की अवधारणा का यथार्थ निरूपण करते हैं। संकुचित अर्थ में काम शब्द वासना पूर्ति का द्योतक है किंतु यह विस्तृत अर्थ में महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति से संबंधित है। इसमें जैविक, बौद्धिक और आर्थिक एवं व्यक्ति के चारित्रिक पक्ष से संबंधित मूल्य हैं। अर्थ पुरुषार्थ वह सामाजिक मूल्य है जिसमें पारिवारिक मूल्य, सामाजिक मूल्य और सांस्कृतिक मूल्य आते हैं। धर्म समाज को सुचारू व्यवस्था प्रदान करने से संबंधित पुरुषार्थ हैं इसीलिए इनके अंतर्गत राजनीतिक, राष्ट्रीय एवं वैश्विक मूल्य आते हैं। मोक्ष पुरुषार्थ का अभिप्राय आध्यात्मिक, दार्शनिक, धार्मिक चिंतन से है जो मूल्यत: आत्मा की आवाज़ पर आधारित हैं। इस प्रकार प्रथम तीन वर्गों के मूल्यों का संबंध मनुष्य एहिक जीवन से है और अंतिम स्वकर्तव्य पालन के रूप में आस्था प्राप्त करने वाले आध्यात्मिक जीवन से है। इस वर्गीकरण को बिंदुओं में निम्नानुसार प्रकट किया जा सकता है:-

1. वैयक्तिक मूल्य

वैयक्तिक मूल्यों मैं देहिक मूल्य, आर्थिक मूल्य, चारित्रिक मूल्य आते हैं। व्यक्ति का स्वंय हित साधन या निजी मूल्य ही वैयक्तिक मूल्य कहलाते हैं। समाज में रहने के कारण ही व्यक्ति समाज व राष्ट्र के रीति-रिवाजों और प्रथाओं को मानने हेतु बाध्य होता है। डॉ. धर्मपाल मैनी के अनुसार "वैयक्तिक मूल्य में आत्मबल, आत्मविश्वास, स्वाभिमान, आत्मनिर्भरता, संतोष, धैर्य, संकल्प एवं

सहायता संबंधी मूल्य की गणना की है।"[55] व्यक्तित्व का निर्माण व विकास शरीर, मन एवं आत्मा से निर्मित होता है। इस कारण इस मूल्य में ही दैहिक और चारित्रिक मूल्य शामिल किए गए हैं।

1.1 दैहिक मूल्य

शारीरिक हित से संबंधित सभी मूल्यों को दैहिक मूल्य की श्रेणी में रखा गया है। ''दैहिक मूल्यों का संबंध मनुष्य के शरीर संबंधी आवश्यकताओं से संबंधित मूल प्रवृत्तियों से है जैसे भूख, जिजीविषा, काम मूल प्रवृत्तियां ही वे प्राथमिक अनिवार्यताएं, प्रेरणाएं हैं जो मनुष्य को शरीररक्षा और शरीर तुष्टि हेतु क्रियाशीलता प्रदान करती है।"[56]

1.2 आर्थिक मूल्य

यह आर्थिक जीवन से संबंधित मूल्य है। आज के अर्थ प्रधान युग में इस की प्रधानता ने अन्य मूल्यों को गौण कर दिया है। डॉ. विश्म्भर उपाध्याय लिखते हैं कि "आज इसे भ्रमवश चरम मूल्य माना जाने लगा है। आर्थिक मूल्य उच्चतर मूल्यों का साधन होते हैं, जिन समाजों में वे साध्य बनने लगते हैं। वहां उच्चतर मूल्यों का ह्रास होने लगता है।"[57] आज इसी वजह से उच्चतर मूल्यों का ह्रास हो रहा है।

1.3 चारित्रिक मूल्य

चारित्रिक मूल्यों का संबंध व्यक्ति के मनोभावों से अर्थात वैयक्तिक धरातल से है। ''यदि वैयक्तिक मनोभाव उचित रीति-नीति में विकसित पल्लवित हुए हैं तो उससे व्यक्ति विशेष का चारित्रिक विकास संभव हो जाता है और इसमें कमी से व्यक्ति का चरित्र खंडित हो जाता है। यह मूल्य निजी विकास और समाज के विकास के द्योतक हैं।"[58]

2. सामाजिक मूल्य

"सामूहिकता, सहानुभूति आदि मूल प्रवृत्तियों के कारण एक व्यक्ति, दूसरे व्यक्ति से परिवार, राज्य तथा अन्य सामाजिक संस्थानों से व्यवहार रखता है और इस व्यवहार के प्रति निर्मित जीवन दृष्टि ही सामाजिक मूल्यों का निर्माण

करती है।"[59]यह व्यापक परिप्रेक्ष्य है। इसके अंतर्गत पारिवारिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य शामिल हैं।

2.1 पारिवारिक मूल्य

सर्वप्रथम मनुष्य परिवार में ही मूल्यों को आत्मसात करता है। परिवार शिष्टाचार तथा अतिथि सत्कार, बड़ों के प्रति श्रद्धा, गुरुजनों का आदर और पारिवारिक मर्यादा, कर्तव्य आदि परिवारिक जीवन की मुख्यधारा है। वह परिवारिक जीवन मूल्य है जो सामाजिकता का अनिवार्य अंग बनकर सामाजिक उन्नयन में सहायक सिद्ध होते हैं।

2.2 सांस्कृतिक मूल्य

सांस्कृतिक मूल्य संस्कृति से प्रत्यक्ष रूप से संबंधित होते हैं। इस संबंध में डॉ. नगेंद्र का कथन है कि "सांस्कृतिक मूल्यों से अभिप्राय उन तत्वों से है जो सत्य के संधान और सिद्धि में सहायक होते हैं। जीवन की कल्याण साधना अर्थात भौतिक और आध्यात्मिक विकास में योगदान करते हैं। सौंदर्य चेतना को जागृत एवं विकसित करते हैं।"[60] सांस्कृतिक तत्वों में मानव की अनेक व्यवस्थाएं ज्ञान और विश्वास प्रणालियां होती हैं। सांस्कृतिक मूल्य, सामाजिक जीवन के रक्षा कवच होते हैं। सामाजिक मूल्य समाजिक व्यवस्था के लिए संतुलन बनाए रखने वाले सिद्ध होते हैं।

3. राजनीतिक, राष्ट्रीय एवं वैश्विक मूल्य

राजनीतिक मूल्यों में स्वतंत्रता, समानता व शांति से संबंधित मूल्य आते हैं। डॉ. ममता गुप्ता लिखती हैं कि "जहां वसुंधरा मानव का पालन पोषण अपने वत्स के समान करती है, वहां मानव का भी यह दायित्व होता है कि वह अपनी मातृभूमि की रक्षा करें। इसी दायित्व की भावना को जब एक जन समुदाय अपने कर्तव्य के रूप में ग्रहण कर लेता है, तभी राष्ट्र का अस्तित्व प्रत्यक्ष होता है।"[61] देशप्रेम, मातृभूमि के प्रति अनुराग, समस्त प्राणियों प्राकृतिक पदार्थों के प्रति महत्त्व, संस्कृति के प्रति प्रगाढ़ आस्था आदि और आत्मबलिदान की प्रेरणा राष्ट्रीय मूल्यों के रूप में आदर्श भावना की अनुभूति होती है। अत: मूल्य से ही एक सुदृढ़ मज़बूत राष्ट्र का निर्माण होता है। वैश्विक मूल्यों में विश्व भाईचारे की

भावना होती है। हिंसागत विचार, संकुचित सीमाओं के स्वार्थ, जाति, धर्मगत भेदभावों से ऊपर उठकर अंतरराष्ट्रीय शांति और सहिष्णुता वैश्विक मूल्यों में आते हैं। अतः मानव मात्र का कल्याण और एकता ही इन मूल्यों का मूल भाव है। डॉ. देवराज 'पथिक' के अनुसार "आज का युग विश्व बंधुत्व का है। हमने आज से हज़ारों वर्ष पूर्व अपने पूर्वजों के स्वर में 'वसुधैव कुटुंबकम' का स्वर सुन रखा है। यदि गंभीरतापूर्वक विचार किया जाए तो यह तथ्य अपने आप स्पष्ट हो रहा है कि अंतरराष्ट्रीयता अथवा विश्व-बंधुत्व मानव सभ्यता के इतिहास की वह मंजिल है जिसके पूर्व राष्ट्रीयता का पड़ाव आना स्वाभाविक है।"[62] आज यह स्पष्ट हो रहा है कि विश्व बंधुत्व मानव सभ्यता के इतिहास की वह मंजिल है जिसके पूर्व राष्ट्रीयता का पड़ाव आता है।

4. आध्यात्मिक, दार्शनिक एवं धार्मिक मूल्य

भारतीय संस्कृति में आध्यात्मिक मूल्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। आध्यात्म धर्म की आत्मा है। ईश्वर में अटूट विश्वास, आस्था और भक्ति परम आध्यात्मिक मूल्य है। आध्यात्म और दर्शन एक-दूसरे से संबंधित हैं। दर्शन का अर्थ है-'देखना'। अपने आपको जांचनें, देखने-परखने से इसका अर्थ लिया जाता है। भारतीय दर्शन का मुख्य विषय- ब्रह्मा, जीव और माया के पारस्परिक संबंधों की चर्चा ही रहा है। अदृश्य शक्ति में विश्वास एवं आस्था धार्मिक मूल्यों का आधार है। भारतीय संस्कृति में धर्म ही समस्त सामाजिक, सांस्कृतिक गतिविधियों एवं कार्यकलापों का मूल आधार रहा है। धार्मिक मूल्य के आधार पर नाम स्मरण, सत्संगति, गुरु की महत्ता, तीर्थाटन-तीर्थस्थान, यज्ञ-अनुष्ठान आदि निर्गुण\सगुण उपासनापरक साधनों के द्वारा ईश्वर की उपासना करना धार्मिक मूल्य है। डॉ. धर्मपाल मैनी के अनुसार, "धार्मिक मूल्यों के अंतर्गत अव्यक्त सत्ता में विश्वास, भगवत-भक्ति, कीर्तन, गुणगान, प्रार्थना आदि को लिया जा सकता है।"[63] आध्यात्मिक, दार्शनिक एवं धार्मिक मूल्यों के अंतर्गत मोक्ष को चरम मूल्य माना गया है। मोक्ष का अभिप्राय आत्मा के संतोष से है।

मूल्यों के वर्गीकरण के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारतीय चिंतन परंपरा के मूल्यों यथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का विस्तृत रूप आज भी प्रासंगिक है। यह मूल्य एकपक्षीय नहीं है। यह जीवन को संपूर्णता के साथ व्यक्त करते हैं। आज

समाज की पतनावस्था का कारण ग़ैर मूल्यों का पनपना है। अतः समाज में मूल्यों के संरक्षण की अत्यंत आवश्यकता है।

2.6 मूल्य विघटन का अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

समाज में विभिन्न कारणों यथा मशीनीकरण, विदेशी संस्कृति का संपर्क, औद्योगिकरण, शिक्षा आदि के कारण परिवर्तन आते हैं। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरुप मानव जीवन भी बदलता है, धारणाएं बदलने लगती हैं। उससे मूल्यों में भी बदलाव आने लगता है। भारतीय समाज में परंपरा और नए मूल्यों का संघर्ष प्रबलता से अनुभव किया जा रहा है। समाज में नित्य नये मूल्य उत्पन्न हो रहे हैं। पुराने विश्वासों, धारणाओं के विरोध में नवीन विचारों, नवीन मान्यताओं का जन्म एक अनिवार्यता है। हमारा वर्तमान जीवन पारंपरिक समाज व्यवस्था से विलग होता हुआ नूतन सभ्यता में प्रवेश कर रहा है। हमारी संस्कृति आज संक्रांति के दौर से गुजर रही है। जीवन के प्रति एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण उभर रहा है। मूल्य क्योंकि समाज सापेक्ष होते हैं। अतः समाज के इस सक्रांति काल में मूल्यों का संकट भी उपस्थित हो गया है। साहित्य में आज मूल्यहीनता, मूल्यों का संकट, मूल्यशून्यता, मूल्य विघटन आदि पारंपरिक मूल्यों के अस्वीकार के लिए कितने ही शब्द प्रचलित हैं। कुछ लोग इसे पुराने मूल्यों के ध्वंस की स्थिति मान रहे हैं और कुछ लोग इसे नूतन मूल्य निर्माण की भूमिका। दरअसल परंपरागत रूढ़िवादी मूल्यों के स्थान पर नए मूल्यों की स्थापना के प्रयास होते हैं, तब कुछ लोग इसे मूल्य विघटन की संज्ञा देते हैं और कुछ लोग मूल्य विकास का नाम। आज युग संक्रमण की स्थिति में है। इसमें सब कुछ बदल रहा है। धर्म, ईश्वर विश्वास का स्थान, आस्था, मानव, विज्ञान, बुद्धि और तर्क ने ले लिया है। मानो अपना नियामक खुद बन बैठा है। वह अब किसी देवी सत्ता को समर्पित नहीं है। उसने इतना अधिक भौतिक विकास कर लिया है कि मन-आत्मा, परम-चेतना की उसे आवश्यकता ही नहीं दिखती है। आज परिस्थितियां बदल चुकी हैं। मनुष्य धार्मिकता, नैतिकता एवं आध्यात्मिकता से विछिन्न होकर अपनी अस्मिता की खोज में है। मानव आज स्वयं को अकेला महसूस करने लगा है। इस अकेलेपन ने उसमें भय, अजनबीपन, संत्रास, संशय, मृत्युबोध और कुंठा को जन्म दिया है। भीड़ ने उसे बेनाम और

आकृतिहीन कर दिया है। उसका निजी अस्तित्व अथवा व्यक्ति स्वातंत्र्य खतरे में पड़ गया है। एक भयानक शून्यता ने उसे घेरे रखा है। व्यक्तित्व की अलग प्रतिष्ठा की भावना एवं आर्थिक कठिनाइयों से परिवार एवं पारिवारिक मूल्य विघटित हो रहे हैं। विवाह, प्रेम एवं यौन संबंधों को नई दृष्टि से देखा जाने लगा है। विवाह अब जन्म-जन्मांतरों का आत्मिक संबंध न होकर, कुछ वर्ष साथ रहने के लिए 'कॉन्ट्रैक्ट' बन गया है। प्रेम में निस्वार्थता के भाव को नकारा जा चुका है। प्रेम केवल दैहिक आकर्षण या आर्थिक पहलू को दृष्टि में रखकर किया जाता है एवं पवित्रता का नारा बेकार करार दिया गया है। यौन संबंधी नैतिकता की धारणा खंडित हो चुकी है। राजनीति, राष्ट्रीय हितों के बदले व्यक्ति हितों में जुड़ गई है। विभिन्न राजनीतिक दल, अपने-अपने दल या विचारधारा को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करने में व्यस्त जनता को दिग्भ्रमित कर रहे हैं। कुर्सी हथियाने के खातिर दल परिवर्तन कर लिया जाता है। चुनावों पर संकुचित राष्ट्रीयता एवं संप्रदायिकता के लिए अवसर निकाल दिए जाते हैं। राजनीति के भ्रष्ट हो जाने से राजनीतिक मूल्यों में भी पतन की प्रक्रिया जारी है। अर्थ प्रधान युग में अर्थ ही सर्वस्व बन बैठा है। अर्थ तथा अर्थ की प्राप्ति में नित्य नीति, धर्म-अधर्म, पाप- पुण्य, अच्छाई-बुराई सब मूल्य एकाकार हो गए हैं। पारिवारिक मूल्य विखंडित हो रहे हैं। अर्थ ही रिश्तें संबंधों का निर्धारण करने लगा है। मूल्य विघटन के इस काल में दो विचारधाराएं उत्पन्न हैं- पहली विचारधारा आदर्शवादी है और दूसरी विचारधारा प्रगतिवादी। आदर्शवादी विचारधारा के पक्षपाती पुरातन मूल्यों को पुन: प्रतिष्ठित करने के पक्ष में हैं, उनके अनुसार पारंपरिक मूल्यों की एकमात्र श्रेष्ठ सामाजिक प्रतिमान हैं। दूसरी विचारधारा वाले समाज में युगीन मांग के अनुसार परिवर्तन के पक्षधर हैं। मूल्य विघटन के स्वरूप संबंधी भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने कुछ परिभाषाएं दी हैं जो इस प्रकार हैं:-

हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार

"हमारे सामने समाज का आज जो रूप है वह न जाने कितने ग्रहण तथा त्याग का रूप है।"[64]

समाजशास्त्रीय सत्यकेतु विद्यालंकार के शब्दों में

सामाजिक विघटन वह प्रक्रिया है जिसमें कि किसी जन समूह के सदस्यों के बीच स्थापित संबंध टूट जाते हैं या नष्ट हो जाते हैं।"[65]

कृष्णदत्त भट्ट के अनुसार

"सामाजिक विघटन वह प्रक्रिया है जिससे सामाजिक संगठन का विशाल भवन लड़खड़ाने लगता है। मानवीय अभिवृतियों एवं मूल्य में गिरावट आने लगती है। सामाजिक संरचना का संतुलन बिगड़ने लगता है। समाज में उसके कारण असंतोष, कलह संघर्ष की प्रबलता होने लगती है।"[66]

फरिस के अनुसार

"यह मनुष्य के काम करने के संबंधों को इतना तोड़ देता है जिससे समूह के स्वीकृत कार्यों के निष्पादन में बाधा पहुंचती है।"[67]

माउरर के शब्दों में

"सामाजिक विघटन सामाजिक परिवर्तन का स्वाभाविक परिणाम तथा प्रकृत अवस्था भी है।"[68]

किंग्सले डेविस लिखते हैं

"सामाजिक परिवर्तन से हमारा अभिप्राय उन परिवर्तनों से है जो सामाजिक संगठन अर्थात समाज की संरचना और कार्य में उत्पन्न होते हैं।"[69]

इनकी परिभाषा से स्पष्ट है कि कार्यों में किसी प्रकार के बदलाव के प्रभाव से ही मूल्य में परिवर्तन होता है। मूल्य विघटन से मानवीय विचारधारा व दृष्टिकोण में परिवर्तन आ जाता है। मूल्यों के विघटन से समाज लक्ष्यहीन व उद्देश्यहीन हो जाता है। इससे समाज में अनैतिकता, बेईमानी, भ्रष्टाचार, शोषण आदि दुर्गुणों का बोलबाला हो जाता है। परोपकार, दयाभाव, पड़ोस धर्म का पालन, मानवतावादी दृष्टिकोण को अपनाना यह जीवन मूल्य हैं जिनका विघटन होने से मानव, मानव न रहा, पशु बन बैठा है। यही पशु प्रवृत्ति है कि आप, आप ही चरें। मानव केवल अपने बारे में ही सोच रहा है। 'वसुधैव कुटुंबकम' की विशाल संकल्पना के विघटन होने से सारी पृथ्वी पर खतरे के बादल मंडरा रहे हैं। मैं, मेरी

पत्नी और मेरे बच्चे बस और कोई नहीं। इस धारणा से सामाजिक मूल्य विघटन हुआ और संयुक्त परिवार समाप्त हो गए। इस पर डॉ. धीरज बणकर लिखते हैं कि "निरंतर बढ़ती भोगवादी दृष्टि के कारण हमारे प्राचीन मूल्यों का ह्रास होने लगा है। समाज के साथ-साथ मनुष्य के विचारों में परिवर्तन आता है। विचार में जिस शीघ्रता से परिवर्तन होते हैं उतनी शीघ्रता से पारिवारिक प्रथाओं, मान्यताओं, आदर्शों व परंपराओं में परिवर्तन नहीं होता। इसीलिए नये विचारों एवं परंपरागत मान्यताओं में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है।"[70] नए पुराने का संघर्ष ही मूल्यों में बदलाव का कारण बनता है। सामाजिक मूल्य, सामाजिक और व्यक्तिगत विघटन का कारण भी बन सकता है। मूल्यों के आधार पर व्यक्ति अपनी मनोवृत्तियां बनाता है जो व्यक्ति की मनोवृत्तियों और सामाजिक मूल्यों में संघर्ष होता है तो सामाजिक विघटन की स्थिति उत्पन्न होती है। आज विवाह संस्था के प्रति लोगों में पुरानी आस्था, निष्ठा और समर्पण नहीं रहा है। परिणामस्वरूप व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में जो तनाव उत्पन्न होता है उससे सामाजिक विघटन की प्रक्रिया प्रबल होती है। प्राय: सभी स्तरों पर मूल्य का विघटन देखा जा सकता है।

2.7 मूल्य विघटन के प्रमुख कारण एवं दिशाएं

मूल्य विघटन से अभिप्राय मूल्य में होने वाले परिवर्तन से है। किसी वस्तु का चाहे विकास हो या गिरावट यदि स्वरूप में अंतर आता है तो वही परिवर्तन होता है। मूल्य विघटन एक अटल प्रक्रिया है। प्रत्येक युग में मूल्य परिवर्तन चलता रहता है। प्रत्येक युग में मूल्य परिवर्तन के विभिन्न कारण होते हैं। अतः मूल्य विघटन की दिशाओं व कारणों का भिन्न-भिन्न होना स्वाभाविक ही है। समाज की प्रचलित नैतिक व्यवस्था एवं मनुष्य की वर्जितोन्मुखी अंतश्चेतना का द्वंद आदर्श और यथार्थ का निरंतर संघर्ष एवं मनुष्य की नवान्वेषणप्रियता मूल्य परिवर्तन के प्रमुख आधार हैं। मूल्य परिस्थितियां मूल्य तंत्र को निर्मित करती हैं। वहीं इनके बदलने से मूल्य संक्रमित होते हैं उनमें परिवर्तन होता है ।

2.7.1 राजनीतिक शक्तियां

राजनीतिक शक्तियां उठा-पटक, शासन तंत्र का बदलना, नई नीतियां आदि भी मूल्य में परिवर्तन के कारण बनते हैं। आज के राजनीतिक मूल्य के बारे में विद्यानिवास मिश्र लिखते हैं कि "आज की राजनीति लोगों को आगे ले जाने वाली नहीं है, लोगों के आगे चले जाने वाली है। उनको धकेल कर, कुचलकर, अतिक्रांत कर, रौंदकर, किसी न किसी रूप में दौड़ करके आगे निकल जाना उसका लक्ष्य है। उसमें दोष राजनीति का नहीं, बल्कि राजनीति के नाम पर जीवन के मानदंडों से छूट लेने वाले मन का है।"[71] यहां राजनीति नहीं बल्कि राजनीतिक नेताओं की भ्रष्टता ही राजनीतिक मूल्यच्युति का कारण बनती है।

2.7.2 सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियां

मूल्य विघटन में समाज, परिवार और व्यक्ति की भूमिका आदि अन्य पक्षों का भी योगदान रहता है। परिवार एवं परिवार के सदस्यों का परंपरागत सामाजिक बंधनों के प्रति परंपरा रहित व्यवहार और स्थितियों की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। समष्टि के स्थान पर व्यष्टि की महत्व प्रतिष्ठा के परिणामस्वरुप परंपरागत सामाजिक बंधनों में स्वाभाविक रूप से शिथिलता आती है। व्यक्ति स्वतंत्र चेतना ने संयुक्त परिवार प्रथा को आहत किया है। इस चेतना से दांपत्य जीवन प्रभावित हुआ है। सेक्स के प्रति दृष्टिकोण भी बदला है। "विवाह के परंपरागत बंधन ढीले हो गए हैं। विवाह दो आत्माओं का पुनीत मिलन, जन्म-जन्मांतर का संबंध एक धार्मिक संस्था न रहकर मात्र एक मैत्री संबंध अथवा समझौता रह गया है जो टूट सकता है। परंपरागत वैवाहिक जीवन अविच्छिन्न था। प्रेम विवाह अंतर्जातीय-विवाह एवं विधवा विवाह आदि मूल्य नहीं कहे जा सकते। प्रेम का परंपरागत स्वरूप क्षत-विक्षत हो गया है।"[72] विभिन्न जातियों अथवा संस्कृतियों के परस्पर आदान-प्रदान से जो मूल्यों में परिवर्तन आते हैं। सांस्कृतिक मूल्यों का परिवर्तित रूप नवीन मूल्यों की उद्भावना एवं स्थापना करता है तथा उन्हें प्रकर्ष की ओर अग्रसर करता है।

2.7.3 आर्थिक शक्तियां

मूल्य विघटन में आर्थिक शक्तियों का विशेष महत्व है। अर्थ के कारण ही समाज में श्रमिक एवं पूंजीपति नामक दो वर्ग अस्तित्व में आए हैं। इन दोनों वर्गों में

परस्पर हितों या स्वार्थों की रक्षा हेतु संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। जिससे मूल्य विघटन को बल मिलता है। अर्थ संघर्ष ने ही शहरीकरण, औद्योगीकरण, मशीनीकरण, बेकारी रूपी अनेक विसंगतियां को जन्म दिया है। इससे आर्थिक विघटन की स्थिति बनती है। औद्योगीकरण और मशीनीकरण के कारण ही आधुनिकीकरण की अवधारणा का जन्म हुआ। इस कारण समाज में भौतिक उन्नति हुई और नए मूल्य भी अस्तित्व में आए। इससे प्रचलित मूल्यों को धक्का लगा। वैज्ञानिक भौतिकवाद ने परंपरागत मूल्यों को नकार दिया और बात को कार्य कारण के आधार पर तोड़ने लगा। आधुनिकता को जीवन बोध के अर्थ में लेने से इसमें एक ओर विज्ञान और यांत्रिकी से संबंध चिंतन समाहित हो जाता है। दूसरी ओर मार्क्सवाद, अस्तित्ववाद, गांधीवाद आदि आधुनिक विचारधाराएं भी आ जाती हैं। "आधुनिकीकरण के साथ मूल्यों में भी परिवर्तन होता है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में मूल्य उत्पन्न होते हैं तथा आधुनिकता बोध में मूल्य परिवर्तन के चेतना का उन्मेष होता है। आधुनिकिकरण के सभी माननीय पक्ष वस्तु के मूल्य की समस्या हुआ करते हैं।"[73] आधुनिकता बोध के कारण स्वातंत्र्य चेतना का विकास हुआ। इससे नारी सामाजिक बंधनों से मुक्त हुई है। नारी संबंधी परंपरागत मूल्य ध्वस्त हुए हैं। आधुनिकीकरण का प्रभाव वस्तुत: अवश्यंभावी भी है।

2.7.4 धार्मिक परिस्थितियां

भारतीय संस्कृति में धर्म को सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। धर्म उचित, अनुचित की व्याख्या करता है। आधुनिक युग में विज्ञान के कारण मनुष्य धर्म को भी तर्क की दृष्टि से देखने परखने लगा है। वैज्ञानिक चिंतन के कारण परंपरागत मूल्यों का ह्रास हुआ और विभिन्न प्रकार के मूल्यों का विघटन हुआ। मूल्य संबंधी प्राचीन धारणा को वैज्ञानिक चेतना द्वारा विवेक की कसौटी पर परखने से दृष्टिकोण में परिवर्तन आना स्वाभाविक है। डॉ. गिरिराज शर्मा 'गुंजन' के अनुसार "ईश्वर संबंधी परंपरागत धारणाओं से व्यक्ति का विश्वास उठ गया और शक्ति रूप में ईश्वर के सापेक्ष स्वरूप को स्वीकृति प्रदान की गई। इस प्रकार पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक, सुख-दुख, जन्म-मृत्यु एवं नीति संबंधी परंपरागत मान्यताओं में भी

पर्याप्त अंतर दृष्टिगोचर होता है।"[74] अतःस्पष्ट है कि मूल्यों में परिवर्तन का एक प्रमुख घटक धार्मिक परिस्थितियां भी हैं।

2.7.5 वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं वैचारिक दृष्टियां

विज्ञान मनुष्य को भौतिक वास्तविकता का ज्ञान कराकर चिंतन की नई दिशाएं खोलता है। विज्ञान ने न केवल रहन-सहन बल्कि जीवन दृष्टि को भी गंभीरता से प्रभावित किया है। विज्ञान ने सबसे बड़ी चुनौती धर्म और अध्यात्म से जुड़े मूल्यों को दी है। डॉ. राम जी तिवारी लिखते हैं कि "विज्ञान के प्रभाव में आज हर क्षेत्र में नकार और निषेध की स्थिति उत्पन्न हो गई है। प्रयोग के परिवर्तनशील प्रक्रिया में हर प्रकार के स्थायित्व को चुनौती दी जा रही है। नवता के आग्रह से स्थायी मूल्यों की अवमानना की जा रही है।"[75] पश्चिम के विभिन्न विचारकों ने मानव के मूल्य बोध को गहरा आघात पहुंचाया। आस्तिकता, भक्ति आदि को स्वीकारते हुए विज्ञान ने पारलौकिक सत्ता के अस्तित्व को नहीं माना। फ्रायडवाद, अस्तित्ववाद, विकासवाद, साम्यवाद आदि विज्ञान प्रेरित सिद्धांतों ने मानव चिंतन की नई दिशाएं दी। लेकिन विज्ञान पर यह दोषारोपण भी किया जाता है कि ‘'वैज्ञानिक दृष्टिकोण ने प्राचीन धर्म और दर्शन जन्म मूल्यों का नाश तो किया लेकिन मानव जाति को निश्चित मूल्य नहीं दिए।"[76] इस संबंध में डॉ. हेमेंद्र पानेरी का यह विचार हैं कि "एक ओर टायनबी मनहेम, इलियट आदि विचार विज्ञान को अस्वीकार करते हुए धार्मिक दृष्टिकोण और तद्ज्जन्य मूल्यों की प्रतिष्ठा करना चाहते हैं। दूसरी ओर हक्सले, आयल ईश्वर को नकारते हुए वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाते हुए मनुष्य को स्वतंत्र, विवेकी महान बनाना चाहते हैं और नई मूल्य व्याख्या का जन्म संभव मानते हैं। लॉरेंस हेमिंग्वे काम आदि का तीसरा वर्ग निराश व क्रुद्ध है। इन्होंने वर्तमान परंपरागत संपूर्ण संस्कृति, वैज्ञानिक उन्नति और प्रगति का विरोध करते हुए प्रारंभिक विशृंखल स्थिति, कार्य और असंगति का समर्थन किया। इनकी धारणा के अनुसार दुख हमारा बंधन और असफल कार्य हमारी नियति।"[77] स्पष्ट है कि वैचारिक दृष्टिकोण की भिन्नताएं मूल्यों को प्रभावित करती हैं। नगरीकरण, तीव्रगामी संचार व्यवस्था, विध्वंसात्मक अस्त्र आर्थिक प्रतियोगिता आदि समाज में व सामाजिक मूल्यों में तीव्रगामी परिवर्तन ला रहे हैं। अति आधुनिकता के संचरण को भी मूल्यों के

परिवर्तन के लिए उत्तरदाई ठहराया गया है लेकिन मूल्य परिवर्तन तभी माना जाना चाहिए जब किसी न किसी मूल्य की उपस्थिति हो। पुराना उखड़ जाए, नया उगे नहीं अर्थात कोई मूल्य न हो तो वह मूल्य परिवर्तन की स्थिति नहीं है। अतः इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं विभिन्न वैचारिक दृष्टिकोण ने मूल्यों पर काफी प्रभाव डाला है।

2.8 मूल्य और साहित्य

साहित्य समाज का दर्पण है और समाज भिन्न-भिन्न व्यक्तियों का समूह है। समाज के बिना साहित्य की कल्पना करना असंभव है। साहित्य और समाज दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। अत: साहित्य को अगर जीवन की आलोचना कहा जाए तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। साहित्य समाज का सांस्कृतिक अंग है। समाज के जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा का आधार साहित्य ही है। साहित्य का उद्देश्य समाज के जीवन मूल्यों को सुरक्षित रखना है इसीलिए साहित्य नए जीवन मूल्यों को ग्रहण करता है। साहित्य इस विकास को महत्वपूर्ण बनाता है। साहित्य समाज में व्याप्त तत्कालीन मूल्यों को अपनाता है किंतु नवीन मूल्यों को समाज द्वारा गति भी प्रदान करता है। "मानवीय मूल्य के संदर्भ में यदि हम साहित्य को नहीं समझते तो अकसर हम ऐसी झूठी प्रतिमान योजना को प्रश्रय देने लगते हैं कि समस्त साहित्य अभियान गलत दिशा में मुड़ जाता है।"[78] जिस कारण साहित्यिक मूल्यों को समझना कठिन हो जाता है। अतः मूल्य और साहित्य एक-दूसरे पर आश्रित हैं। साहित्य सभी मूल्यों को जनजीवन की व्यावहारिकता में देखता है। वह मूल्यों को कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के अध्ययन-अध्यापन एवं चर्चा, परिचर्चा के विशेष संदर्भ से काटकर मूल्यों को जन सामान्य के लिए बनाता है। किसी सामान्य व्यक्ति, समाजशास्त्री, वैज्ञानिक और दार्शनिक की तुलना में साहित्यकार का दायित्व अधिक होता है। साहित्यकार से भिन्न अन्य सभी विद्वानों का संबंध जीवन अथवा संस्कृति के किसी एक पहलू विशेष से होता है जबकि साहित्यकार का दायित्व पूरी संस्कृति के मूल्यात्मक विकास का दायित्व होता है। साहित्य साहित्यकार का अनुभूत सत्य होता है। वह बदलते परिवेश में कलाकार की चेतना के प्रसार का सूचक होता है। उसमें ज्ञान-विज्ञान के प्रभावों के असीम क्षेत्र, पुराने मूल्यों के विघटन की जानकारी

तथा नयी संवेदना और अनुभूति की ग्रहणशीलता रहती है। मूल्यों का प्रश्न वास्तव में साहित्य के अभिप्राय, उपलब्धि और उद्देश्य से बंधा रहता है। साहित्यकार को आत्मोपलब्धि दोहरे स्तर पर होती है। अपने पहले रूप में वह मूल्यों के समझने में समस्त युगीन बोध की प्रक्रिया से गुजरता है और दूसरे स्तर पर उपलब्ध मूल्यों को साहित्य में नियोजित करता है। वह जीवन का मूल्यादृष्टा और मूल्यसृष्ठा दोनों रूपों में साक्षात्कार करता है। उसकी दृष्टि में जीवन की महत्ता सैद्धांतिक की अपेक्षा व्यवहारिक दृष्टिकोण में अधिक रहती है। यही कारण है कि साहित्य में प्रयुक्त होकर जीवन मूल्य केवल सिद्धांत नहीं रह जाते। साहित्य में जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति उसी तरह सीधी तर्कपूर्ण और वक्तव्य प्रधान नहीं होती जैसी ज्ञान-विज्ञान और नीतियां धर्म के क्षेत्र में होती हैं। साहित्य प्रतीकात्मक होता है। जिसमें जीवन मूल्य उपचेतन मन में से बदलकर चेतना लोक में आ जाते हैं। इस प्रकार साहित्यकार के लिए जीवन मात्र वस्तु नहीं होता, साहित्यकार का मूल्यों के प्रति दृष्टिकोण तटस्थ होता है। मूल्यों को व्यक्तिगत अभिरुचि का विषय मान लेने से मूल्यों, समाज, साहित्य में से किसी एक के साथ न्याय नहीं हो सकता। साहित्य आत्माभिव्यक्ति है और आत्मा का यह रूप व्यक्तिगत से भिन्न सर्वात्तम से संबंध रखता है इसीलिए साहित्य में व्यक्तिगत मूल्यों का स्वरूप व्यक्ति के माध्यम से अनुभूत सामाजिकता का ही स्वरूप है। यही नहीं साहित्य के मूल्य एक देशकाल, परिस्थितियों अथवा परिवेश से युक्त होकर भी सामाजिकता की विशद एवं व्यापक मानवीय आयामों से संपृक्त होने के कारण देशकाल तथा संस्कृति के लोगों को भी प्रभावित करते हैं। इसीलिए साहित्य सर्वकालिक, सार्वभौमिक और सर्वाधिक संग्रहणीय कला होता है। साहित्यकार जीवन से किसी भी स्तर पर कट नहीं सकता, फलत: जीवन मूल्यों से भी। ध्वन्यालोककार का मत है कि "काव्य संसार अपार है, कवि उसका प्रजापति है जैसा उसे विश्व रचता है वैसा ही उसे वह परिवर्तित कर देता है।"[79] साहित्यकार की मूल्य प्रतीति दार्शनिक की तुलना में अधिक व्यापक होती है। दार्शनिक या अन्य चिंतक अनुभूति की सीमा को मूल्य प्रतीति तक ही सीमित करके देखते हैं जबकि साहित्यकार अपनी अतिरिक्त संवेदना से उसे जीवन उन्मुख कर देता है। सांस्कृतिक स्तर पर मूल्यों से अवगत होकर वह संस्कृति में उत्पन्न सहनशीलता और मूल्यगत विघटन से

भी अवगत हो जाता है। वह नए मूल्यों की मर्यादा और प्रतिष्ठा के महत्व को भी समझ लेता है।

शंभूनाथ के अनुसार "साहित्य में जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति उसी तरह सीधी, तर्कपूर्ण और वक्तव्य प्रधान नहीं होती, जैसी ज्ञान-विज्ञान और नीति के क्षेत्र में होती है...समस्त साहित्य प्रतीकात्मक होता है। जिसमें जीवन मूल्य अचेतन मन से बदलकर चेतन मन में आ जाते हैं।"[80] अत: साहित्य में मूल्यों की व्यंजना होती है न कि सैद्धांतिक रूप की। साहित्य का प्रयोजन मानव जीवन को अर्थवत्ता प्रदान करना है। यह अर्थवत्ता जीवन मूल्यों की चेतना से प्राप्त होती है। मूल्य ही साहित्य अस्मिता का वास्तविक आधार है और इन्हें तिरस्कृत कर साहित्य के सही स्वरूप का परिचय नहीं मिल पाता। साहित्य प्रतिष्ठित मूल्यों ने समाज को अधिक व्यापकता एवं गहराई से प्रभावित किया है। इन प्रभावों के कारण समाज में बदलाव की प्रक्रिया तेज होने के उदाहरण उल्लेखनीय है। इस बारे में प्रो. उमा केवलराम लिखती हैं कि "व्यवसायिक दृष्टि के कारण शोषक और शोषितों में कलह होने के कारण अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होने लगी। शिक्षित मध्यवर्ग को नौकरियां पाना चंद लोगों के आर्थिक समस्याओं और उद्योग धंधों पर अधिकार के कारण कठिन हो गया। इन दिनों साहित्य में जो कुंठा, हताश, अवसाद आदि का दर्शन होता है उसका यही अवसरवाद है। इसी आर्थिक विपन्नता के कारण मध्यवर्गीय समाज की मान्यताओं एवं जीवन मूल्यों में परिवर्तन आने लगा।"[81] परिस्थितियों के अनुरूप मूल्य में परिवर्तन होता है। राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक उथल-पुथल से परंपरागत मूल्यों में परिवर्तन आता है। मनुष्य मूल्य अन्वेषण इसीलिए करता है कि वह बदलते परिवेश के साथ कुछ सृजन करना चाहता है। नव सृजन का स्वप्न ही मूल्यों के बदलाव के लिए उत्तरदायी होता है। विभिन्न विचारकों, चिंतकों की विचारदृष्टियां, जीवनदृष्टियां साहित्य में सिद्धांत रूप में स्थान पाकर मूल्य बन जाती हैं और जनमानस के चिंतन को अपेक्षित नवीन दिशा प्रदान कर मूल्य संक्रमण का आधार बनती हैं। आर्थिक क्षेत्र में नवीन मूल्यों के अभाव में महत्वपूर्ण भूमिका वाली कार्ल मार्क्स की विचारदृष्टि पर गोर्की के साहित्य का व्यापक प्रभाव रहा है। भारतीय साहित्य इतिहास में इन प्रभावों को देखा जा सकता है। महात्मा गांधी, श्री अरविंदो आदि महान विचारकों के जीवन दर्शन से प्रभावित होकर मुंशी

प्रेमचंद, प्रसाद, पंत, निराला आदि अनेक साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से संस्कृति, मनोविज्ञान, दर्शन आदि के क्षेत्र में वैचारिक क्रांति को चेतना प्रदान की और मूल्यों के संक्रमण में योगदान दिया। मानव धर्म के अनुकूल मूल्य चुनने में साहित्य मार्ग दीपक के समान समाज के सामने आता है।

संक्षेपत: मूल्य और साहित्य का पारस्परिक अन्योन्याश्री संबंध है। यह एक-दूसरे के पूरक हैं। मूल्य और साहित्य मुख्यत: मानव मात्र के हित चिंतन पर बल देते हैं। जीवन को सुखी, आनंदमय बनाते हैं। जीवन मुक्ति की ओर अग्रसर करते हैं इसीलिए भारतीय चिंतनधारा ने मूल्य और साहित्य को पूर्ण रूप से एक ही माना है। मूल्यहीन साहित्यिक कृति बौद्धिक बचकानापन होती है। साहित्य पाठकों में उपयोगी जीवन मूल्यों की चेतना जागृत कर जीवन स्थिति के परिवर्तन एवं जीवन के परिष्कार में सहायक होता है। इसी वजह से साहित्यकार हमारा पथ प्रदर्शक है। वह हमारे मनुष्यत्व को जगाता है। मनुष्य जाति में सद्भाव पैदा करता है।

2.9 मूल्य का महत्व एवं प्रासंगिकता

व्यक्ति के व्यक्तितत्व का निर्माण एवं विकास समाज में होता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सर्वप्रथम परिवार से ही व्यक्ति आज्ञा पालन, प्रेम, आदर, सेवाभाव, दया, ममता, पवित्रता, मातृत्व-पितृत्व, दाम्पत्य की भावना, मर्यादा, संतानकामना आदि मूल्यों को ग्रहण करता है। "सामाजिक मूल्यों की स्थिति व्यक्ति के व्यवहार संबंधी आचार-विचार, लोकविश्वास अवधारणा, मान्यता, आदर्श आदि को प्रभावित करती है। अत: वे मूल्य समाज के निर्माता हैं। यही सामाजिक संबंधों को एक सूत्र में पिरो कर उसे निष्क्रियता से बचाकर गतिशील करते हैं और संस्कृति को यथोचित आधार देते हैं क्योंकि मानव समाज मूल्यों का संग्रह व संगठन है जो उसकी व्यवस्था को अनुशासित करते रहते हैं।"[82] मूल्य किसी भी समाज का मुख्य आधार या मेरुदंड होते हैं जो व्यक्तियों की इच्छा, आवश्यकता और अभिरुचियों को प्रभावित करते हैं। किसी स्थान विशेष के मूल्यों के अनुसार ही वहां की संस्कृति एवं सभ्यता बनती बिगड़ती है। यह स्पष्ट है कि मूल्य सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करते हैं। मूल्य सामाजिक संबंधों का निर्धारण भी करते हैं। "मूल्य सामाजिक विकास के मानक होते हैं।

समाज के संगठन के कारण एवं समाज में एकता उत्पन्न करने में मूल्यों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। मूल्य सामाजिक संबंधों का निर्धारण करते हैं, उन्हें संतुलित करते हैं, समाज के निर्माता हैं जो कि सामाजिक संबंधों में एकता स्थापित करते हैं। यही मूल्य आदर्श व्यक्तित्व का चहुमुखी विकास करते हैं। संस्कृति को सही आधार देते हैं। उन्हें समाज विशेष के आदर्श विचारों एवं व्यवहारों के प्रतीक होते हैं। हमारे रहन-सहन का ढंग, वेशभूषा, बाहरी क्रियाएं, कला का प्रदर्शन, तौर तरीको आदि सभी कुछ सामाजिक आदर्शों से प्रभावित एवं नियंत्रित होते हैं।"[83] सामाजिक क्षमता का मूल्यांकन भी समाज में रहकर ही संभव हो पाता है। मूल्यों द्वारा ही मूल्यांकन होता है। मूल्य ही समाज में विभिन्न सामाजिक भूमिकाओं का निर्देशन करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की भूमिका मूल्य द्वारा निर्देशित होती है। समाज व्यक्ति से विभिन्न प्रकार की भूमिकाओं की अपेक्षा रखता है। पिता, पुत्र, अध्यापक, अधीनस्थ, पति-पत्नी, भाई-बहन आदि पर सामाजिक भिन्नता के द्योतक हैं। "भूमिका के माध्यम से हम समाज में विभेदीकरण उत्पन्न करते हैं जो कि सुचारू सामाजिक संचालन की व्यवस्था के लिए आवश्यक हैं।"[84] मूल्य सामाजिक नियंत्रण के प्रभावशाली साधन हैं। सामाजिक नियंत्रण समाज में एकता एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए लोगों के व्यवहार नियमन से संबंधित हैं। वह नियमन मूल्यों के द्वारा ही संभव है। समाज द्वारा व्यक्ति का चहुंमुखी विकास होता है। इस दृष्टि से भी मूल्यों का अतुलनीय महत्व है। समाज के संदर्भ में मूल्यों का केंद्रीय भाव कर्तव्य बोध है। व्यक्ति भिन्न-भिन्न समय एवं स्थल पर भिन्न-भिन्न दायित्वों का निर्वाह करता है। इन सभी दायित्वों, कर्तव्यों का अंतिम लक्ष्य मानव कल्याण या नैतिक उत्थान होता है।

इस प्रकार यहां मूल्य हमेशा व्यक्ति को कर्म करने को प्रेरित करते हैं। राष्ट्र के संदर्भ में भी मूल्यों का महत्व कम नहीं है। राष्ट्र व्यक्ति को सामाजिक प्राणी बनाने की सभी आवश्यक सामग्री प्रदान करता है। राष्ट्रीय मूल्य की भावना में कर्तव्य बोध होता है। यह कर्तव्य बोध व्यक्ति से दायित्व निर्वाह की मांग करता है। जिससे व्यक्ति कर्तव्यनिष्ठ बनता है। इन मूल्यों को अपनाने से व्यक्ति का विकास होता ही है, साथ ही राष्ट्र में भी उन्नति होती है। वस्तुतः "मूल्य मनुष्य की वह सांस्कृतिक पूंजी है जिसके आधार पर समाज विशेष का स्तर जाना

जाता है। वास्तव में मानवीय मूल्य वह वैचारिक इकाई है जिसके माध्यम से सामाजिक, धार्मिक, नैतिक के द्वारा व्यक्ति और समाज का विकास संभव है।''[85] किसी भी समाज व देश के मूल्य ही उनके विकास का कारण बनते हैं। प्रासंगिकता का अर्थ 'सार्थकता' अथवा महत्ता से है। मूल्य की महत्ता व्यक्तिगत एवं सामाजिक दोनों में है। मूल्य व्यक्ति के आत्म विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। डॉ. राधाकमल मुखर्जी ने व्यक्ति, समाज और मूल्य में विद्यमान पारस्परिक संबंध एवं प्रभाव को दर्शाने के लिए इन्हें एक दीपक की बत्ती (the wick) तेल (oil) और ज्योति कहा है। उनके शब्दों में "मनुष्य और समाज तैरती हुई बत्ती और गहरी तेल के बीच वाले अनंत आदान-प्रदान से मूल्य अनुभव की उजरी स्थिर ज्योति पनपती है। ज्योति हमारे नीरस और निरानंद विश्व को निरंतर प्रकाश और गरमाहट देती रहती है।"[86] इस प्रकार तेल के बिना बत्ती अधूरी है और ज्योति के बिना बत्ती और तेल दोनों ही अर्थहीन है। वास्तव में व्यक्ति और मूल्य का संबंध शरीर और आत्मा की तरह होता है। व्यक्ति अपने जीवन में मूल्यों को सामाजिकरण द्वारा आत्मसात करता है एवं अपने आचरण व्यवहार और जीवन को मूल्यों के अनुरूप ढालने की कोशिश करता है। वस्तुतः मूल्य द्वारा ही व्यक्ति सही अर्थों में सामाजिक प्राणी बन पाता है। मूल्य राष्ट्रीय एवं विश्व स्तर पर उतने ही प्रासंगिक हैं जितने कि व्यक्ति एवं समाज स्तर प्रासंगिक है। मानव के कल्याण में ही मूल्यों की सार्थकता निहित है। मूल्यों के महत्व एवं प्रासंगिकता के बारे में सुकेश शर्मा लिखते हैं कि "मूल्य से स्वस्थ व्यक्तित्व एवं स्वस्थ परिवार की संरचना तथा स्वस्थ समाज एवं स्वस्थ राष्ट्र की नींव निर्मित होती है। मूल्य मानव जीवन के विषय में भी मनुष्य की जीवन रूपी नौका के लिए आकाशदीप की भांति मार्गदर्शन करते रहते हैं। उसे पथभ्रष्ट होने से बचाते हैं। 'सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय' की भावना से भरे हुए हैं। यह उस संजीवनी बूटी की तरह है जो मृतप्राय प्राणों में विश्वास फूंक देते हैं, मां के आंचल की शीतल छाया की तरह हैं जो मनुष्य को जीवन भर सुख प्रदान करती है तथा पूर्वजों के उन आशीर्वादों की तरह है जो मनुष्य की जीवन पर्यंत रक्षा करते हैं। इस प्रकार मूल्य उस अभेद्य, अजेय सुरक्षा कवच की तरह है जिसकी बदौलत मनुष्य भवसागर से सकुशल पार उतर जाता है। यह वह शक्तिपुंज है जो मनुष्य की आत्मा को सशक्त बनाते हैं। जिससे मनुष्य परम संतुष्ट अनुभव

करता है।"[87] वास्तव में मनुष्य जीवन की पूर्णता समग्रता का आधार मूल्य ही है।

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि मानव जीवन की सार्थकता मूल्यों में निहित है। मूल्यों की महत्ता का एक तत्व है-जीवन को सुरक्षित रखते हुए मानव एवं मानव समाज का समुचित विकास। मूल्यों का सहारा लेकर मनुष्य अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं एवं आदर्शों को प्राप्त करता है। वही स्मष्टि के स्तर पर मूल्य समाज संस्कृति को अस्तित्ववाद बनाते हैं, उसे संचालित करते हैं, दिशानिर्देश देते हैं। मूल्य मानव, समाज, राष्ट्र में एकता एवं स्थायित्व लाने का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। मूल्य समाज में व्यवस्था तो स्थापित करते ही हैं, यह समाज के सर्वश्रेष्ठ मानक भी हैं। प्रायः मूल्यों की आधारभूमि में परिवर्तन नहीं होता, किंतु परिस्थिति जन्य मूल्यांकन, परिवर्तन और संस्कार परिष्कार होता रहता है। यह मूल्य संक्रमण की निरंतर होने वाली अनिवार्य प्रक्रिया है। इसी कारण नए मूल्य अस्तित्व में आते हैं। पुरातन में से अनुपयोगी, अशुभ और अकल्याणकारी मूल्यों को त्यागना और शुभ उपयोगी एवं कल्याणकारी मूल्यों को अपनाना श्रेयस्कर है। वैयक्तिक स्वार्थपरता अहंकार से ऊपर उठकर समग्र मानव समाज एवं मानव कल्याणर्थ मूल्यों का संरक्षण परिरक्षण आवश्यक है।

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासकारों ने इस कार्य हेतु सश्रम उल्लेखनीय प्रयास किए हैं। उन्होंने समाज के सभी वर्गों के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक एवं दार्शनिक पक्षों को समग्र विशेषताओं के साथ अपने उपन्यासों में उभारने का प्रयास किया है। परिवार की टूटन, सफेदपोश व्यक्तियों का जीवन संघर्ष, स्त्री -पुरुषों की जटिल मानसिकता, घुटन, टेंशन आदि संवेदनशील पहलुओं को भी नए संदर्भ प्रदान करके कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। स्वतंत्रता के बाद मूल्य में जो विघटन हुआ, परंपरागत नैतिकता का जो विरोध हुआ, उससे नए जीवन मूल्य उभर आए। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों का यही प्रतिपाद्य विषय है। स्वतंत्रता प्राप्ति देश विभाजन, संविधान आदि से जीवन में बहुआयामी बदलाव आया है। परिवर्तित आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों से उपन्यासकारों को नई विषय सामग्री प्राप्त हुई है। उनकी दृष्टि समाज की अपेक्षा व्यक्ति पर केंद्रित हुई। स्वातंत्र्योत्तर काल में नई पीढ़ी के

उपन्यासकारों में धर्मवीर भारती, राजेंद्र यादव, मोहन राकेश, कमलेश्वर आदि नाम शीर्षस्थ है जोकि युगबोध से प्रभावित हों, अपनी कालगत जटिलताओं तथा जीवन में आए बदलावों को परिभाषित करने का दायित्व निभाते रहे हैं।

संदर्भ सूची :-

1.वामन शिवराम आप्टे, संस्कृति हिंदी कोश, पृ.112
2.डॉ. मोहिनी शर्मा, हिंदी उपन्यास और जीवन मूल्य, पृ.1
3.डॉ. धीरेंद्र वर्मा, हिंदी साहित्य कोश (भाग- 1), पृ.659
4.इनसाइक्लोपीडिया, ब्रिटानिका, संपादन 1968, पृ.962
5.डॉ. नगेंद्र, मानविकी परिभाषा कोश (दर्शन खंड), संपादन 1965, पृ.186
6.बैजनाथ सिंहल, नई कविता : मूल्य में मीमांसा, पृ.99
7.डॉ. देवराज, संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, पृ.30
8.डॉ. पुष्पपाल, समकालीन कहानी युगबोध का संदर्भ, पृ.33
9.गोविंदचद्र पांडे, मूल्य मीमांसा, पृ.39
10.हुकुमचंद राज्यपाल, समकालीन कविता में मानव मूल्य, पृ.17
11.हेमेंद्र कुमार पानेरी, स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास:मूल्य संक्रमण, पृ.17
12.धर्मवीर भारती, मानव मूल्य और साहित्य, पृ.134
13.रमेशकुंतल मेघ, सौंदर्यमूल्य और मूल्यांकन, पृ.11
14.कु. रजनी, निर्मल वर्मा के उपन्यास साहित्य मूल्यपरक अध्ययन, पृ.11
15.डॉ. धीरज भाई बणकर, कमलेश्वर का कहानी साहित्य और सामाजिक यथार्थ, पृ.176
16.डॉ. हेमेंद्र कुमार पानेरी, स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास:मूल्य संक्रमण, पृ.2
17.एंड बी.सिंह मुखर्जी, द फिलॉसफी ऑफ सोशल साइंस, पृ.23
18.डॉ. जगदीश गुप्त, नयी कविता-स्वरूप और समस्याएं, पृ.12
19.डॉ. रमेश देशमुख, आठवें दशक की हिंदी कहानी और जीवन मूल्य, पृ.13
20.वही
21.कु. रजनी, निर्मल वर्मा के उपन्यास साहित्य: मूल्यपरक अध्ययन, पृ.12
22.वही
23.shodhganga.inflibnet.ac. से ली गई सामग्री का आधार

24.हुकमचंद राजपाल, आधुनिक काव्य में नवीन जीवन मूल्य, पृ.63
25.हुकमचंद राजपाल, समकालीन कविता में मानव मूल्य, पृ.26
26.ओमप्रकाश सारस्वत, बदलते मूल्य और आधुनिक हिंदी नाटक, पृ.8
27.डॉ. मोहिनी शर्मा, हिंदी उपन्यास और जीवन मूल्य, पृ.5
28.डॉ. हरीश सेठी, जीवन मूल्य विमर्श, पृ.40
29.डॉ. गौरीशंकर भट्ट, भारत में समाजशास्त्रीय प्रजाति और संस्कृति, पृ.244
30.डॉ. नवल किशोर, मानववाद और साहित्य, पृ.52
31.सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', दिनमान, पृ.44
32.Crober, Culture, पृ.173
33.डॉ. हुकुमचंद राजपाल, समकालीन कविता में मानव मूल्य, पृ.20
34.डॉ. नगेंद्र, भारतीय सौंदर्यशास्त्र की भूमिका, पृ.160
35.डॉ. कमलेश गुप्ता, कविता और मूल्य संक्रमण, पृ.14
36.वही
37.वही, पृ.15
38.वही पृ.15
39.वही, पृ.16
40.वही, पृ.12
41.वही, पृ.13
42.वही
43.डॉ. देवराज, संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, पृ.336
44.श्रीमती प्रेम सिंह, साठोत्तरी कहानी और परिवर्तित मूल्य, पृ.181
45.कु. रजनी, निर्मल वर्मा का उपन्यास साहित्य : मूल्य परक अध्ययन, पृ.15
46.रमेश चंद्र लवानिया, हिंदी कहानी में जीवन मूल्य, पृ.14
47.गोविंदचद्र पांडे, मूल्य मीमांसा, पृ.244
48.डॉ. हुकुमचंद राजपाल, आधुनिक काव्य में नवीन जीवन मूल्य, पृ.70
49.कु. रजनी, निर्मल वर्मा का उपन्यास साहित्य : मूल्यपरक अध्ययन, पृ.16
50.वही
51 डॉ. हुकमचद राजपाल, समकालीन कविता में मानव मूल्य, पृ.38
52.W.M.Urban, Fundental of Ethics, p.164

53.डॉ. रमेश देशमुख, आठवें दशक की हिंदी कहानी में जीवन मूल्य, पृ.23
54.डॉ. मोहिनी शर्मा, हिंदी उपन्यास और जीवन मूल्य, पृ.35
55.डॉ. धर्मपाल मैनी, भारतीय जीवन मूल्य, पृ.7
56.डॉ. मोहिनी शर्मा, हिंदी उपन्यास और जीवन मूल्य, पृ.23
57.डॉ.विश्म्भर उपाध्याय, जलते और उबलते प्रश्न, पृ.23
58.डॉ. हरीश सेठी, जीवन मूल्य विमर्श, पृ.168
59.डॉ. धर्मपाल मैनी, भारतीय जीवन मूल्य, पृ.7
60.डॉ नगेंद्र, नयी समीक्षा:नई संदर्भ, पृ.80
61.डॉ. ममता गुप्ता, धर्मगाथा और जातीय संघर्ष, पृ.56
62.डॉ. देवराज शर्मा 'पथिक', हिंदी की राष्ट्रीय काव्यधारा : एक समग्र अनुशीलन, पृ.43
63.डॉ. धर्मपाल मैनी, भारतीय जीवन मूल्य, पृ. 9
64.डॉ.नीरज जैन, आधुनिक हिंदी उपन्यास व्यक्तित्व विघटन के निकष पर,पृ.21
65.वही, पृ. 28
66.वही
67.वही
68.वही
69.डॉ. नीरज जैन, आधुनिक हिंदी उपन्यास व्यक्तित्व विघटन के निकष पर, पृ.28
70.डॉ. धीरज भाई बणकर, कमलेश्वर का कहानी साहित्य और सामाजिक यथार्थ, पृ.183
71.संपा. विद्यानिवास मिश्र, साहित्य अमृत (संपादकीय), पृ.4
72.डॉ. गिरिराज शर्मा 'गुंजन', हिंदी नाटक:मूल्य संक्रमण, पृ. 31
73.डॉ. रमेश कुंतल मेघ, क्योंकि समय एक शब्द है, पृ.17
74.डॉ. गिरिराज शर्मा 'गुंजन', हिंदी नाटक: मूल्य संक्रमण, पृ. 28
75.डॉ. रामजी तिवारी, हिंदी समीक्षा में काव्य मूल्य, पृ. 309
76.महावीर दाधीचि, आधुनिकता और भारतीय परंपरा, पृ.22
77.डॉ. हेमेंद्र कुमार पनारी, स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास : मूल्य संक्रमण, पृ.28-29

78.धर्मवीर भारती, मानव मूल्य और साहित्य, पृ.10
79.बैजनाथ सिंहल, नई कविता: मूल्य मीमांसा, पृ.112
80.डॉ. शंभूनाथ सिंह, व्यक्ति और सृष्टा, पृ. 95
81.उमाकेवलराम, मन्नू भंडारी की कहानियों में आधुनिक बोध, पृ.19
82.डॉ. धीरजभाई बणकर, कमलेश्वर का कहानी साहित्य और सामाजिक यथार्थ, पृ.178
83.आनंद कुमार, समाजशास्त्र की प्राथमिक अवधारणाएं, पृ.166
84.डॉ. नरेंद्र कुमार सिंधी एवं वसुधाकर स्वामी, समाजशास्त्र विवेचन, पृ.72
85.संपा. डॉ.एम .बी. पटेल एवं डॉ दिलीप मेहरा, साठोत्तरी हिंदी उपन्यास, पृ.100
86.Dr. Radhakamal Mukherjee, The Socia Structure of Values, p.12
87.सुकेश शर्मा, भारतीय संस्कृति में मानव मूल्य और लोक कल्याण, पृ.5